

मुकदमों का विवरण

प्रिया इंडोरिया

वी.

कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। (2023 की आपराधिक अपील सं. 003549-003552/2023) 20 नवंबर, 2023

[बी. वी. नागरत्ना और उज्जल भुवन, जे. जे.] हेडनोट्स

विचार के लिए विषय: क्या उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय की धारा 438 सी. आर. पी. सी. के तहत अग्रिम जमानत देने की शक्ति का प्रयोग उक्त न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर दर्ज एफ. आई. आर. के संबंध में किया जा सकता है और क्या पारगमन अग्रिम जमानत या अंतरिम संरक्षण देने की प्रथा सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के समक्ष धारा 438 सी. आर. पी. सी. के तहत अग्रिम जमानत मांगने वाले आवेदक को आवेदन करने में सक्षम बनाने के लिए आपराधिक न्याय के प्रशासन के अनुरूप है।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 -धारा 438-अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत-उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय की धारा 438 सीआरपीसी के तहत अनुदान देने की शक्ति, यदि उक्त न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर दर्ज प्राथमिकी के संबंध में प्रयोग किया जा सकता है:

आयोजित किया गया: उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय की क्षेत्रीय सीमा के बाहर किए गए अपराध के लिए अंतरिम अग्रिम जमानत देने के लिए सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय की अधिकारिता पर पूर्ण प्रतिबंध को जन्म देने वाली व्याख्या उन वास्तविक आवेदकों के लिए एक विसंगत और अन्यायपूर्ण परिणाम का कारण बन सकती है जो गलत, दुर्भावनापूर्ण या राजनीति से प्रेरित अभियोजन का शिकार हो सकते हैं-ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालयों को न्याय तक पहुंच के हितकारी सिद्धांत के संदर्भ में अभियुक्त के हित को संतुलित करना चाहिए जो संविधान के अनुच्छेद 21 का एक पहलू है और साथ ही राज्य नीति-कला का एक निदेशक सिद्धांत है। 39 (ए) के साथ-साथ अनुच्छेद 14-अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत देने की शक्ति का प्रयोग केवल असाधारण और मजबूर करने वाली परिस्थितियों में किया जाना चाहिए, जिसका अर्थ है कि जहां पारगमन अग्रिम जमानत या अंतरिम संरक्षण से इनकार करने से आवेदक को सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय के समक्ष धारा 438 के तहत आवेदन करने में सक्षम बनाने से आवेदक के लिए अपरिवर्तनीय और अपरिवर्तनीय पूर्वाग्रह पैदा होगा-526 को ध्यान में रखते हुए

न्याय तक पहुँच की हितकारी अवधारणा के लिए, अभियुक्त उस राज्य के न्यायालय से सीमित पारगमन अग्रिम जमानत या सीमित अंतरिम सुरक्षा की मांग कर सकता है जिसमें वह रहता है, लेकिन ऐसी स्थिति में, उस राज्य के सक्षम न्यायालय से 'नियमित' या पूर्ण-स्तरीय अग्रिम जमानत की मांग की जा सकती है जिसमें प्राथमिकी दर्ज की गई है-इससे अभियुक्त को अग्रिम जमानत लेने के लिए अपनी पसंद का न्यायालय चुनने के लिए भी प्रेरित किया जा सकता है-इस प्रकार, न्यायालय की प्रक्रिया के साथ-साथ अभियुक्त द्वारा कानून के दुरुपयोग से बचने के लिए, जिस न्यायालय के समक्ष अग्रिम जमानत के लिए याचिका दायर की जाती है, उसके लिए यह आवश्यक है कि वह अभियुक्त और न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बीच क्षेत्रीय संबंध या निकटता का पता लगाए।[पारस 26,34,37,39,40]

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973** -धारा **438**-गिरफ्तारी की आशंका रखने वाले व्यक्ति को जमानत देने का निर्देश-पारगमन अग्रिम जमानत या अंतरिम सुरक्षा प्रदान करना ताकि अग्रिम जमानत की मांग करने वाले आवेदक को सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा **438** के तहत आवेदन करने में सक्षम बनाया जा सके, यदि वह आपराधिक न्याय के प्रशासन के अनुरूप है:

आयोजित किया गया:अभियुक्त उस राज्य में पूर्ण रूप से अग्रिम जमानत की मांग नहीं कर सकता है जहां वह एक निवासी है जब प्राथमिकी एक अलग राज्य में दर्ज की गई है-हालाँकि, वह उस राज्य में सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय से पारगमन अग्रिम जमानत की मांग करने का हकदार होगा जहां वह एक निवासी है जो आवश्यक रूप से एक सीमित अवधि का होना चाहिए ताकि सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय से नियमित अग्रिम जमानत की मांग की जा सके-इस तरह के प्रावधान की आवश्यकता संबंधित व्यक्ति की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के लिए है-क्योंकि अग्रिम जमानत के साथ-साथ पारगमन अग्रिम जमानत आंतरिक रूप से व्यक्तिगत स्वतंत्रता से जुड़ी हुई है। भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 और चूंकि न्याय तक पहुँच की अवधारणा को ऐसी स्थिति में विस्तारित किया गया है और अनुच्छेद 14 को ध्यान में रखते हुए संवैधानिक जमानत देना आवश्यक होगा।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी।

अभियुक्त जो गिरफ्तारी की आशंका कर रहा है और न्याय तक पहुँच के सिद्धांतों के खिलाफ होगा। [पैरा 45,46]

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973**-एसएस।**438, 177** - जांच और मुकदमे का सामान्य स्थान, यदि उस स्थान को शामिल करता है जहां शिकायतकर्ता-पत्नी अपने पति से अलग होने के बाद रहती है:

आयोजित किया गया:एस के अनुसार।177 विशेष रूप से पत्नी द्वारा क्रूरता और घरेलू हिंसा का आरोप लगाने वाले वैवाहिक मामलों में, यदि गैर-कानूनी तत्वों में से कोई भी स्थानीय अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं हुआ है, तो वह अधिकार क्षेत्र वैवाहिक अपराध की जांच और मुकदमे का सामान्य

स्थान नहीं हो सकता है-वैवाहिक घर में किए गए कृत्यों के कारण पत्नी के माता-पिता के घर में रहने के दौरान भी उसके मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।⁴⁹⁸ माता-पिता के घर में ए-जिस स्थान पर पत्नी पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा की गई क्रूरता के कृत्यों के कारण वैवाहिक घर से चले जाने या भगा दिए जाने के बाद शरण लेती है, उस स्थान पर भी शिकायत दर्ज करने का अधिकार क्षेत्र होगा-तथ्यों पर, शिकायतकर्ता-पत्नी का दावा है कि उसे राजस्थान के चिरावा में अपने माता-पिता के घर लौटने के बाद भी फोन पर जान से मारने की धमकी और उत्पीड़न मिला है, मुकदमे का सामान्य स्थान चिरावा हो सकता है-विवादित आदेशों से, आरोपी-पति और उसके परिवार के सदस्यों को राजस्थान के पुलिस स्टेशन में जांच अधिकारी और लोक अभियोजक को नोटिस जारी किए बिना अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत दी गई थी, जिसमें शिकायतकर्ता ने प्राथमिकी दर्ज की थी-विवादित आदेश अलग कर दिए गए थे-आरोपी को अधिकार क्षेत्र से संपर्क करने के लिए।[पैरा 48,49]

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973** -धारा **438**-अग्रिम जमानत की मंजूरी-मुख्य विशेषताएं-उल्लिखित।[पैरा **9.6**]

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973** -धारा **438**-अग्रिम जमानत की मंजूरी-अभिव्यक्ति "उच्च न्यायालय" या "सत्र न्यायालय"-निर्माण:

आयोजित किया गया:एस के पढ़ने पर।⁴³⁸ यह नहीं पाया गया है कि "उच्च न्यायालय" या "सत्र न्यायालय" शब्द स्थानीय सीमाओं या किसी विशेष क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार की तुलना में प्रतिबंधित है-हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि यदि एक राज्य में प्राथमिकी दर्ज की जाती है तो आरोपी अग्रिम जमानत के लिए दूसरे राज्य के न्यायालय में जा सकता है-वह ऐसा कर सकता है, यदि उस समय

528

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

किसी भी राज्य में एफ. आई. आर. दर्ज करने के लिए, वह किसी अन्य राज्य में वैध उद्देश्य के लिए रह रहा है या वहां मौजूद है-यह सामने नहीं आता है कि "उच्च न्यायालय" या "सत्र न्यायालय" पद का संदर्भ केवल उस स्थान या क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के लिए होना चाहिए जिसके भीतर एफ. आई. आर. दर्ज की गई है-यदि यह निहितार्थ था, तो यह धारा में ही या आवश्यक निहितार्थ से स्पष्ट रूप से स्पष्ट हो गया होगा-"उच्च न्यायालय" और "सत्र न्यायालय" के समक्ष "द" शब्द के उपयोग का यह भी अर्थ नहीं है कि केवल उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय, जिसका अधिकार क्षेत्र किसी अन्य राज्य में है, पारगमन अग्रिम जमानत देने के लिए अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में सक्षम है।[पैरा 44]

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973** -धारा **438**-अभिव्यक्ति 'पारगमन अग्रिम जमानत'-आवश्यकता और आवश्यकता:

आयोजित किया गया:पारगमन अग्रिम जमानत की आवश्यकता और आवश्यकता इसलिए हुई है क्योंकि पुलिस को दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अन्य क्षेत्राधिकारों में किसी आरोपी का पीछा करने की शक्ति प्रदान की गई है-पुलिस अनुच्छेद 22 की आवश्यकता के संदर्भ में सक्षम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने के लिए आरोपी को उस स्थान से ले जाने के लिए पारगमन रिमांड हासिल करने के लिए बाध्य है जहां उसे गिरफ्तार किया गया है, जहां अपराध दर्ज किया गया है। पारगमन रिमांड का प्राथमिक उद्देश्य पुलिस को हिरासत में लिए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान पर स्थानांतरित करने में सक्षम बनाना है जहां मामले की जांच की जा सकती है-ऐसा प्रतीत होता है कि पारगमन रिमांड की आवश्यकता से, 'पारगमन अग्रिम जमानत' की आवश्यकता उत्पन्न हो गई है, क्योंकि अभियुक्त व्यक्ति बिना किसी उपाय के नहीं हो सकता है।[पैरा 35]

जमानत-प्रत्याशित जमानत-सुरक्षा का विकास-बताया गया।

[पैरा 10]

जमानत-गिरफ्तारी-पूर्व जमानत-संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, केन्या और भारत में कानून की स्थिति-तुलनात्मक कानूनी अध्ययन-बताया गया है।

[पैरा 19,20]

जमानत-सीमित अग्रिम जमानत-उक्त न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर दर्ज प्राथमिकी के संबंध में उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा **438** के तहत अनुदान-पूरी की जाने वाली शर्तें-उल्लिखित।[पैरा **36**]

भारत का संविधान-अनुच्छेद **21**-न्याय तक पहुंच के तहत जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार: प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी।

529

आयोजित किया गया:अनुच्छेद 39 ए, जो समान न्याय और मुफ्त कानूनी सहायता से संबंधित है, को अनुच्छेद 21 का एक विशिष्ट रूप माना जा सकता है-नागरिक को अपनी शिकायत को भड़काने और मौलिक अधिकार के स्तर पर अपने अधिकार के उल्लंघन के रूप में निर्णय लेने के लिए एक न्यायसंगत न्यायनिर्णायक मंच प्रदान किया जाना चाहिए-न्यायनिर्णायक मंच को अपने कामकाज में प्रभावी और न्यायपूर्ण, निष्पक्ष और उद्देश्यपूर्ण माना जाना चाहिए, लेकिन यह सुविधाजनक रूप से पहुंच योग्य और आदेश योग्य भी होना चाहिए-इस प्रकार, न्याय तक पहुंच किसी भी अर्थ और उपयोगिता का संवैधानिक मूल्य तभी होगी जब नागरिक को न्याय का वितरण तेजी से हो।[पैरा 20,22,23]

कानूनों की व्याख्या-दंडात्मक कानून-वैधानिक व्याख्या का नियम:

आयोजित किया गया:दंडात्मक कानूनों का कड़ाई से अर्थ लगाया जाना चाहिए-जब कार्यों को दंडात्मक बनाया जाना है और जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति की हानि या हानि के साथ दौरा किया जाना है, तो व्यक्तिगत स्वतंत्रता की स्पष्ट और सटीक अवज्ञा की आवश्यकता होती है-एक ऐसी

व्याख्या को अपनाने के लिए उचित सावधानी बरती जानी चाहिए जो पाठ की व्याख्या को प्रासंगिक से मेल खाती है-व्यक्तिगत स्वतंत्रता और न्याय तक पहुंच का मौलिक अधिकार, जो संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त और वैधानिक रूप से संरक्षित हैं, को प्रतिबंधात्मक व्याख्या के माध्यम से कम किया जाएगा-एक कानून का अर्थ लगाते समय, संवैधानिक न्यायालय प्रासंगिक रूप से संवेदनशील निर्माण प्रदान करने के लिए बाध्य हैं जो मूल संवैधानिक मूल्यों को संरक्षित करता है और आगे बढ़ाता है-सीआरपीसी जैसे आपराधिक कानूनों की व्याख्या विधायिका के उद्देश्य और इरादे के तर्कसंगत संबंध में की जाती है।[पैरा 25,27,30]

शब्द और वाक्यांश-शब्द 'पारगमन'-का अर्थ-बताया गया।[पैरा

35.1]

शहरों और
अन्य संदर्भों
की सूची

असम राज्य बनाम ब्रोजन गोगोल (डॉ.), (1998) 1 एस. सी. सी. 397; अमर नाथ नियोगी बनाम झारखंड राज्य (2018) 11 एस. सी. सी. 797; नाथू सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2021) 6 एस. सी. सी. 64; नवीनचंद्र मजीठिया बनाम महाराष्ट्र राज्य

[2000] 3 पूरक।एससीआर 82:(2000) 7 एस. सी. सी. 640; रघुवंस दुबे बनाम राज्य

बिहार (1967) 2 एस. सी. आर. 423; दशरथ रूपसिंह राठौड़ बनाम राज्य

महाराष्ट्र [2014] 11 एससीआर 921:(2014) 9 एस. सी. सी. 129; बालचंद जैन बनाम.

530

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

एम. पी. राज्य [1977] 2 एस. सी. आर. 52:(1976) 4 एस. सी. सी. 572; सुशीला अग्रवाल बनाम एन. सी. टी. दिल्ली [2020] 2 एस. सी. आर. 1:(2020) 5 एस. सी. सी. 1; श्री गुरबख्श सिंह सिबिया बनाम पंजाब राज्य [1980] 3 एस. सी. आर. 383:(1980) 2 एस. सी. सी. 565; जामिनी मलिक

बनाम सम्राट (1909) आई. एल. आर. 36 कैल 174, हिदायत उल्ला खान बनाम। द क्राउन, ए. आई. आर. 1949 लाह 77; गुरबख्श सिंह सिबिया बनाम पंजाब राज्य, 1977 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी एंड एच 157; तीस्ता अतुल सीतलवाड़ बनाम महाराष्ट्र राज्य विशेष

अनुमति याचिका (आपराधिक) सं। 2014 का 1770; जोगिंदर कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1994] 3 एससीआर 661:(1994) 4 एस. सी. सी. 260; अनीता कुशवाहा बनाम पुष्प सुदान

[2016] 9 एस. सी. आर. 560:(2016) 8 एस. सी. सी. 509; केंद्रीय अंतर्देशीय जल परिवहन निगम बनाम ब्रोजो नाथ गांगुली [1986] 2 एस. सी. आर. 278:(1986) 3 एससीसी 156;

बिहार राज्य बनाम देवकरण नेन्शी [1973] 1 एससीआर 1004:(1972) 2 एस. सी. सी. 890; सुजाता मुखर्जी (श्रीमती) बनाम प्रशांत कुमार मुखर्जी [1997] 3 एससीआर 1127:(1997) 5 एस. सी. सी. 30; वाई. अब्राहम अजीत बनाम। पुलिस निरीक्षक, चेन्नई [2004]

3 पूरक।एससीआर 604:(2004) 8 एस. सी. सी. 100; रमेश बनाम टी. एन. राज्य [2005] 2

एससीआर 493:(2005) 3 एससीसी 507:; मनीष रतन बनाम एमपी राज्य, [2006] 8

पूरक।एससीआर 226:(2007) 1 एस. सी. सी. 262; रूपाली देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [2019] 6 एस. सी. आर. 577:(2019) 5 एससीसी 384; पुनः::बिनोद रंजन सिन्हा 1981 एससीसी ऑनलाइन कैल 102; एल. आर. नायडू (डॉ.) बनाम कर्नाटक राज्य, 1983 एस. सी. सी. ऑनलाइन कर 206; एन. के. नायर बनाम महाराष्ट्र राज्य, 1985 सी. आर. आई. एल. जे. 1887-संदर्भित।पुनः में -स्टर्मन, 1984.604 F. सप।278. (एफ. ई. डिवाइन (1990)); रेजिना

बनाम गृह विभाग के लिए राज्य सचिव, एक्स पार्टी लीच, (1994) क्यू. बी. 198; कोरोलिन कुथी करंजा बनाम निदेशक लोक अभियोजन (2021)

ई. के. एल. आर.-संदर्भित।

पूर्वानुमेय जमानत:एन इंडियन सिविल लिबर्टीज इनोवेशन, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कम्पेरेटिव एंड एप्लाइड क्रिमिनल जस्टिस, 14:1-2, 107-114;

मैक्सवेल, कानूनों की व्याख्या पर ग्रंथ (10 संस्करण), पृष्ठ 284; संक्षिप्त ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश, 10 वां संस्करण, संशोधित, ब्लैक लॉ शब्दकोश, 11 वां संस्करण-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन शामिल हैं

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय:2023 की आपराधिक अपील Nos.3549-3552।

एल. एक्स. एक्स. आई. अतिरिक्त न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 07.07.2022 से।2022 के सी. आर. एल. एम. Nos.3941,3943,3944 और 3945 में सिटी सिविल एंड सेशन जज, बेंगलुरु सिटी (सी. सी. एच.-72)।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी।

कौस्तव पॉल, वरिष्ठ अधिवक्ता, ऋषि मतोलिया, एच. डी. थानवी, निखिल कुमार सिंह, अचल सिंह बुले, क्षितिज बिक्रमिया, महेंद्र सिंह इंदा, सुश्री सुमती शर्मा, अधिवक्ता।अपीलार्थी के लिए।

डॉ. मनीष सिंघवी, वरिष्ठ अधिवक्ता, वी. एन. रघुपति, एम. बंगारास्वामी, एस. शशांक रेड्डी, सुश्री शुभांगी अग्रवाल, अपूर्व एस., सौरव रॉय, संदीप कुमार झा, वासुदेव सिंह, कौशल शर्मा, अत्तारवा कोतवाल, सुश्री अंजना शर्मा, सुकुमार, दीपक गोयल, कुमार कार्तिकेय, अधिवक्ता।उत्तरदाताओं के लिए।

सर्वोच्च
न्यायालय का
निर्णय/आदेश

न्याय

नागरत्ना, जे.

छुट्टी दे दी गई।

विवाद पर पक्षियों का नज़रिया:

2. हम इस निर्णय की शुरुआत एक दृष्टांत से करते हैं:

गोवा राज्य में कथित तौर पर नशे में धुत एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को लोहे की छड़ से मारता है। हमले का शिकार व्यक्ति घायल है।कथित हमलावर ओडिशा के राउरकेला की यात्रा करता है, जहाँ वह एक कारखाने में काम कर रहा है।इस बीच, घायल के परिवार ने बिचोलिम पुलिस स्टेशन, गोवा में भारतीय दंड संहिता (आई. पी. सी.) की धारा 326 के तहत गंभीर चोट पहुंचाने के अपराध के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ. आई. आर.) दर्ज की। उसी के बारे में पता चलने और अपनी गिरफ्तारी की आशंका होने पर, कथित हमलावर ने राउरकेला पर अधिकार क्षेत्र रखने वाले जिला और सत्र न्यायाधीश, सुंदरगढ़, ओडिशा के समक्ष अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया।क्या कथित हमलावर का आवेदन विचारणीय है या नहीं?ऐसा प्रश्न वर्तमान अपील में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया है।

532 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 15 एस. सी. आर.

मामले के तथ्य:

2.1.वर्तमान अपील शिकायतकर्ता-पत्नी के नेतृत्व में आपराधिक विविध मामलों में बेंगलुरु शहर के विद्वान अतिरिक्त शहर सिविल और सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 1 के आदेशों के खिलाफ की गई है।नं. 3941/2022,3943/2022,3944/2022 और 3945/2022।उक्त आदेशों के अनुसार, बेंगलुरु शहर के अतिरिक्त शहर सिविल और सत्र न्यायाधीश ने आरोपी-पति और उसके परिवार को अग्रिम जमानत दे दी है, अर्थात् प्राथमिकी संख्या में आरोपी संख्या 2,3 और 4, जो भारतीय दंड

संहिता, 1860 ('आई. पी. सी.', संक्षेप में) की धारा 498 ए, 406 और 323 के तहत शिकायतकर्ता-पत्नी द्वारा चिरावा पुलिस स्टेशन, जिला झुंझुनू, राजस्थान में दर्ज की गई है।

2.2.उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम असफल वैवाहिक संबंधों से उत्पन्न दहेज उत्पीड़न, क्रूरता और घरेलू हिंसा से संबंधित आपराधिक शिकायतों की सामाजिक वास्तविकता पर ध्यान देते हैं। आर्थिक उदारीकरण की ताकतों द्वारा पूरक, वैवाहिक और कैरियर की संभावनाओं के लिए युवाओं के बढ़ते प्रवास के साथ, जोड़ों की एक महत्वपूर्ण संख्या दो अलग-अलग राज्यों से आती है, जिसका परिणाम यह है कि एक शिकायतकर्ता-पत्नी का वैवाहिक घर एक अलग राज्य में स्थित है जहाँ से उसका माता-पिता का घर स्थित है।

3. शिकायतकर्ता-पत्नी (यहाँ अपीलार्थी) के अनुसार, वर्तमान अपील को जन्म देने वाले तथ्य, संक्षेप में रिकॉर्ड पर सामग्री से एकत्र किए गए हैं:

3.1.शिकायतकर्ता-पत्नी ने आरोपी-पति से 11.12.2020 पर शादी कर ली और बेंगलुरु में रहने लगी।

3.2.09.11.2021 पर, अभियुक्त-पति ने प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, बेंगलुरु, कर्नाटक के समक्ष हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के तहत एम. सी. नं. 5786/2021 तलाक याचिका का नेतृत्व किया। 15.11.2021 पर तलाक याचिका में नोटिस जारी किया गया था।

3.3.07.03.2022 पर, शिकायतकर्ता-पत्नी ने मामले को प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, बेंगलुरु से अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, चिरावा, झुंझुनू, राजस्थान के न्यायालय में स्थानांतरित करने के लिए इस न्यायालय के समक्ष स्थानांतरण याचिका No.590/22 का नेतृत्व किया।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 534

533

3.4.शिकायतकर्ता-पत्नी ने राजस्थान के झुंझुनू जिले के चिरावा पुलिस स्टेशन में आई. पी. सी. की धारा 498 ए, 406 और 323 के तहत एक प्रथम सूचना रिपोर्ट ('एफ. आई. आर.', संक्षेप में) दर्ज की।

3.5.शादी के समय, शिकायतकर्ता की पत्नी के दो छोटे भाई-बहन अभी भी अविवाहित थे। शिकायतकर्ता-पत्नी के पिता ने हृदय रोगी होने के बावजूद, जिनकी एंजियोप्लास्टी हुई थी, लगभग रु। 46,00,000-शादी पर और आरोपी पति और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा की गई दहेज की मांगों को पूरा किया था, जो उसके पिता, माँ और छोटे भाई हैं, यानी, आरोपी Nos.2,3 और 4.

3.6.कि शिकायतकर्ता-पत्नी दहेज की मांग के लिए उत्पीड़न, यातना और हमले का शिकार थी। आरोपी पति और उसके परिवार ने दावा किया कि उन्हें धोखा दिया गया क्योंकि शिकायतकर्ता-पत्नी के पिता ने शादी के लिए एक करोड़ रुपये खर्च करने का वादा किया था। उत्पीड़न और यातना 11.12.2020 से 06.07.2021 तक जारी रही। शादी के एक साल से भी कम समय तक जो दंपति ने

एक साथ बिताया, आरोपी-पति ने उसे तलाक देने और दूसरी बार शादी करने की बार-बार धमकी देकर उसके साथ क्रूरता की।

3.7.आरोपी-पति ने शिकायतकर्ता-पत्नी को धमकाना और गाली देना शुरू कर दिया और कहा कि शिकायतकर्ता-पत्नी मानसिक और शारीरिक रूप से अंतरंग संबंधों में असमर्थ थे। इसके अलावा, उसने शादी के लगभग एक महीने बाद शिकायतकर्ता-पत्नी को थप्पड़ मारा और कहा कि वह शादी के लिए इच्छुक नहीं था और एक स्वतंत्र जीवन जीना पसंद करता था। उसने शिकायतकर्ता-पत्नी को धमकी दी कि अगर वह साथ रहना चाहती है तो उसे दहेज की मांग पूरी करनी होगी।

3.8.शिकायतकर्ता-पत्नी ने आरोपी पति द्वारा विवाह को पूरा करने से इनकार करने और उस पर किए गए शारीरिक हमले के बारे में अपने ससुराल वालों को सूचित किया, जिन पर 2,3 और 4 का आरोप लगाया जा रहा है। कथित तौर पर, उसके ससुराल वालों ने उसे यह कहकर खारिज कर दिया कि पति के साथ संबंध रखना आवश्यक नहीं था और इस तरह, एक पति होने के नाते, उसे उसे पीटने का अधिकार था। 3.9. इस अनुभव से बहुत दुखी होकर, आरोपी-पति के लिए स्कूटर खरीदने की मांग पूरी की गई। रुपये. 1,01,326-का भुगतान शिकायतकर्ता-पत्नी की मां के बैंक खाते से 12.02.2021 पर ऑनलाइन किया जाना था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

3.10. इसके बाद, आरोपी-पति ने कार की मांग करना शुरू कर दिया, लेकिन मांग पूरी नहीं हो सकी। शिकायतकर्ता-पत्नी को तब भी परेशान किया गया था जब वह कोविड-19 पॉजिटिव थी, और अंततः, उसे 02.06.2021 पर वैवाहिक घर से बाहर निकाल दिया गया था। शिकायतकर्ता-पत्नी के पिता ने आरोपी-पति से अपनी बेटी को वापस लेने की गुहार लगाई, लेकिन आरोपी-पति ने मना कर दिया।

3.11. इसके बाद, 11.06.2021 पर, शिकायतकर्ता-पत्नी के पिता को शिकायतकर्ता-पत्नी को चिरावा वापस लाने के लिए मजबूर किया गया।

3.12. यह अनुमान लगाया गया था कि सामान और कीमती सामान की कीमत रु। 30,00,000-अभी भी आरोपी पति और उसके परिवार के कब्जे में थे। शिकायतकर्ता-पत्नी को आरोपी-पति और उसके परिवार द्वारा लगातार जान से मारने की धमकी दी जाती थी, तब भी जब वह चिरावा में अपने पैतृक घर में थी। जब शिकायतकर्ता-पत्नी चिरावा के पास आई तो आरोपी-पति इंटरनेट कॉल और वीडियो के माध्यम से उसे बेंगलुरु आने पर जान से मारने की धमकी देते रहे और हर समय कहते रहे कि अगर वह बेंगलुरु आई तो वह उसे गुंडों द्वारा मार देगा और उसके शव का भी पता नहीं चलेगा।

3.13. शिकायतकर्ता-पत्नी ने चिकित्सा परीक्षण कराने से इनकार कर दिया और कहा कि जिस समय उसे आरोपी-पति के घर से बाहर निकाला गया था, उस समय उसने अपने माता-पिता को

गर्दन और कंधे के पास हल्के नीले निशान दिखाए थे, लेकिन पति के रवैये में बदलाव की उम्मीद करते हुए, और सामाजिक कलंक से पीड़ित होकर, उसने कोई रिपोर्ट नहीं दी।

3.14. उप-निरीक्षक, चिरावा पुलिस स्टेशन, राजस्थान ने नोट किया कि पीड़ित की रिपोर्ट से आई. पी. सी. की धारा 498 ए, 406 और 323 के तहत अपराध दर्ज किया गया और जांच शुरू की गई। हम दोहराते हैं कि उपरोक्त विवरण शिकायतकर्ता द्वारा बताए गए हैं और मामले के तथ्यों के बारे में हमारे निष्कर्ष नहीं हैं।

विवादित आदेश:

अभियुक्त-पति और उसके परिवार के सदस्यों, अभियुक्त संख्या 2,3 और 4 ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत की राहत मांगी। एमआईएससी। नहीं. 3941/2022, CRL.MISC. नहीं. 3943/2022, CRL। एमआईएससी। नं. 3944/2022 और CRL। एमआईएससी। नं. 3945/2022 अतिरिक्त शहर सिविल और सत्र न्यायाधीश, बेंगलुरु शहर के समक्ष।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 536

535

4. अतिरिक्त शहर सिविल और सत्र न्यायाधीश, बेंगलुरु शहर ने 07.07.2022 पर आरोपी-पति और उसके परिवार के सदस्यों, आरोपी संख्या 2,3 और 4 द्वारा की गई अग्रिम जमानत के आवेदनों को मंजूरी दे दी।

4.1. विवादित आदेशों को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि बगलकुंते पुलिस स्टेशन, बेंगलुरु और चिरावा पुलिस स्टेशन, राजस्थान दोनों जमानत आवेदन में प्रतिवादी थे। अतिरिक्त शहर सिविल और सत्र न्यायाधीश, बेंगलुरु शहर के समक्ष दोनों पुलिस थानों का प्रतिनिधित्व एक ही लोक अभियोजक द्वारा किया गया था।

4.2. विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि जांच अधिकारी ने जांच शुरू कर दी थी, मजार का संचालन किया था, गवाहों के बयान दर्ज किए थे और जांच का एक बड़ा हिस्सा पूरा किया था। यह तर्क दिया गया कि आरोपी पति और उसके परिवार के सदस्यों की संलिप्तता, जिन पर 2,3 और 4 का आरोप लगाया जा रहा है, अभी तक साबित नहीं हुई है। विद्वान न्यायाधीश ने आगे तर्क दिया कि चूंकि कथित अपराध मौत या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं हैं और मजिस्ट्रेट के समक्ष मुकदमा चलाया जाना है, इसलिए अग्रिम जमानत के लाभ से इनकार करने का कोई कारण नहीं है।

4.3. जब चिरावा की पुलिस ने आरोपी पति और उसके परिवार के सदस्यों, आरोपी संख्या 2,3 और 4 को बुलाया, तो यह पता चला कि बेंगलुरु के विद्वान सत्र न्यायाधीश ने उन्हें अग्रिम जमानत दे दी थी। यह बात शिकायतकर्ता-पत्नी ने तब कही जब उन्होंने अदालत की वेबसाइट देखी।

4.4. 09.12.2022 पर, इस न्यायालय ने शिकायतकर्ता-पत्नी की स्थानांतरण याचिका No.590/22 को अनुमति दी और एम. सी. नंबर 5786/2021 को प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, बेंगलुरु से अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, चिरावा, झुंझुनू, राजस्थान के न्यायालय में स्थानांतरित कर दिया।

5. अभियुक्त-पति और अभियुक्त संख्या 2,3 और 4 को अग्रिम जमानत दिए जाने से व्यथित होकर, शिकायतकर्ता-पत्नी ने इस न्यायालय के समक्ष डब्ल्यू. पी. <आई. डी. 1 का नेतृत्व किया, जिसे अपने कानूनी उपायों को आगे बढ़ाने की स्वतंत्रता के साथ <आई. डी. 2 पर वापस लिए जाने के रूप में खारिज कर दिया गया।

6. इसके बाद, अपील के लिए वर्तमान विशेष अनुमति दी गई और इस न्यायालय द्वारा 17.03.2023 पर नोटिस जारी किया गया।आई. डी. 1 पर, इस न्यायालय ने विद्वत अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री विक्रमजीत बनर्जी से अनुरोध किया कि वे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 और संबंधित सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के संदर्भ में उत्पन्न होने वाले प्रभावों को ध्यान में रखते हुए एक न्याय मित्र के रूप में न्यायालय की सहायता करें, जब गिरफ्तारी से पहले जमानत दी जाए।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

एफ. आई. आर. किसी विशेष जिले या राज्य के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में नहीं बल्कि एक अलग राज्य में दर्ज की जाती है।

प्रस्तुतियाँ:

7. हमने श्री विक्रमजीत बनर्जी, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल और विद्वान न्यायमित्र, श्री कौस्तव पॉल, शिकायतकर्ता-पत्नी के विद्वान वरिष्ठ वकील, डॉ. मनीष सिंघवी, राजस्थान राज्य के विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता, श्री वी. एन. रघुपति, कर्नाटक राज्य के विद्वान वकील और श्रीमती को सुना है। अंजना शर्मा, अभियुक्त-पति की विद्वान वकील।हमने अभिलेख पर मौजूद सामग्री का भी अध्ययन किया है।

7.1.विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री बनर्जी ने एक न्यायमित्र के रूप में इस न्यायालय की सहायता करते हुए निम्नानुसार प्रस्तुत किया:

आई. सी. आर. पी. सी. की धारा 438 ने केवल 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' शब्द का उपयोग किया है, जैसा भी मामला हो, लेकिन यह निर्दिष्ट नहीं किया है कि क्या ऐसा 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' वही न्यायालय होना चाहिए जो मामले का संज्ञान ले सकता है या देश भर में कोई 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' हो सकता है।इसलिए, अपने क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र से बाहर पंजीकृत अपराध के लिए अग्रिम जमानत देने की अदालत की शक्ति के बारे में सीमित विधायी मार्गदर्शन मौजूद है, दूसरे शब्दों में, क्या गिरफ्तारी की आशंका वाले व्यक्ति को उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा 'अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत' दी जा सकती है।ii. 'अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत' देने के संबंध में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के अलग-अलग दृष्टिकोणों के बारे में विस्तार से बताते हुए, विद्वान न्यायमित्र ने प्रस्तुत किया कि न्यायालयों ने एक न्यायसंगत और अंतरिम राहत प्रदान करने के लिए 'पारगमन अग्रिम जमानत' दृष्टिकोण विकसित किया है, जिससे

एक अलग राज्य में रहने वाले आरोपी को अग्रिम जमानत लेने के लिए सक्षम बनाया जा सके। ज्ञात न्यायमित्र ने स्पष्ट किया कि अग्रिम जमानत और 'पारगमन अग्रिम जमानत' अलग-अलग हैं, क्योंकि पूर्व को एक समय अवधि तक सीमित किया जा सकता है या नहीं भी किया जा सकता है, जबकि उत्तराद्ध को हमेशा एक विशिष्ट सी समय अवधि के लिए दिया जाता है, जब तक कि कोई आवेदक किसी न्यायालय के समक्ष अग्रिम जमानत के लिए आवेदन नहीं कर सकता है जो इस मामले का 'संज्ञान' ले सकता है। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि इस न्यायालय ने 'पारगमन' को अपनाया था

असम राज्य बनाम ब्रोजन गोगोल 537 में अग्रिम जमानत का दृष्टिकोण

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 538

(डॉ.), (1998) 1 एस. सी. सी. 397 (ब्रोजन गोगोल) और अमर नाथ नियोगी बनाम झारखंड राज्य, (2018) 11 एस. सी. सी. 797।

iii. विद्वान न्यायमित्र ने आगे कहा कि नाथू में यह न्यायालय

सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2021) 6 एस. सी. सी. 64 (नाथू सिंह)

अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार पर इसके अनुचित इनकार के गंभीर प्रभाव को देखते हुए अग्रिम जमानत देने के लिए एक उदार दृष्टिकोण पर जोर दिया।

iv. नवीनचंद्र में इस न्यायालय के फैसले का उल्लेख करते हुए

मजीठिया बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2000) 7 एस. सी. सी. 640, सीखा

न्यायमित्र ने इस न्यायालय को एक वैकल्पिक दृष्टिकोण से अवगत कराया जो आपराधिक कानून में 'कार्रवाई के कारण' सिद्धांत पर आधारित है। वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह प्रस्तुत किया गया था कि कार्रवाई का कारण अनिवार्य रूप से बेंगलुरु, कर्नाटक में पक्षों के वैवाहिक घर में उत्पन्न हुआ और राजस्थान के चिरावा में शिकायतकर्ता-पत्नी के पैतृक घर में जारी रहा। इसलिए, इनमें से किसी भी स्थान पर न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर सकते हैं।

7.2. शिकायतकर्ता-पत्नी/अपीलार्थी की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री पॉल ने निम्नानुसार प्रस्तुत किया:

आई. निष्पक्ष और निष्पक्ष जाँच और मुकदमे का अधिकार न केवल अभियुक्त का बल्कि शिकायतकर्ता का भी मौलिक अधिकार है।

ii. बेंगलुरु की अदालत द्वारा एक एफ. आई. आर. में जमानत की मंजूरी, जो उसके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में दर्ज नहीं थी, ने शिकायतकर्ता-पत्नी को इसका विरोध करने का अवसर नहीं दिया था।

iii. शिकायतकर्ता-पत्नी जमानत याचिका का विरोध नहीं कर सके और चिरावा, राजस्थान के अधिकार क्षेत्र के अभियोजक भी सुनवाई के दौरान अनुपस्थित थे। कि अग्रिम जमानत की मांग करने वाली जमानत याचिका की सुनवाई के समय केवल बेंगलुरु के लोक अभियोजक उपस्थित

थे। उक्त अभियोजक के पास न तो जांच की केस डायरी थी और न ही उस क्षेत्र के पुलिस स्टेशन से कोई सहायता थी जहां एफ. आई. आर. दर्ज किया गया था। इसलिए, विवादित आदेशों को अलग रखा जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

7.3. राजस्थान राज्य के विद्वान वरिष्ठ वकील डॉ. मनीष सिंघवी ने निम्नानुसार प्रस्तुत किया:

आई. क्षेत्रीय अधिकारिता का अस्तित्व कानून के न्यायालय के समक्ष किसी भी मामले की संस्था का आधार है। न्याय के प्रशासन के लिए क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की अवधारणा का महत्वपूर्ण महत्व है। अधिक विशिष्ट रूप से, दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIII और मौजूदा/सामान्य आपराधिक न्यायशास्त्र दोनों ही इस बात को स्वीकार करते हैं कि अंत का नहीं, बल्कि अंत का संज्ञान

लिया जाता है। कि इस न्यायालय ने रघुबंस दुबे बनाम बिहार राज्य (1967) 2 एस. सी. आर. 423 (रघुबंस दुबे) मामले में अभिनिर्धारित किया कि

मजिस्ट्रेट ऑफ एंडर का नहीं बल्कि ऑफ एंडर का संज्ञान लेते हैं। वह क्षेत्रीय अधिकारिता सर्वोपरि महत्व धारण करती है क्योंकि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अनुसार स्थापित दीवानी मुकदमे में प्रतिवादी के विपरीत, जहां तक न्यायालय की अधिकारिता प्रदान करने का संबंध है, उसकी कोई भूमिका नहीं है।

कि, दशरथ रूपसिंह राठौड़ बनाम महाराष्ट्र राज्य में,

(2014) 9 एस. सी. सी. 129 में यह देखा गया कि सी. आर. पी. सी. की धारा 177 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रत्येक अपराध की जांच और मुकदमा सामान्य रूप से उस न्यायालय द्वारा किया जाएगा जिसके स्थानीय अधिकार क्षेत्र में यह किया गया था।

ii. सी. आर. पी. सी. की योजना के बारे में विस्तार से बताते हुए डॉ. सिंघवी ने कहा कि सी. आर. पी. सी. का दूसरा अध्याय क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के अनुसार मजिस्ट्रेटों और न्यायालयों के बीच न्यायिक कर्तव्यों का वितरण करता है। सी. आर. पी. सी. की धारा 14 विशेष रूप से स्थानीय मजिस्ट्रेट (ओं) के अधिकार क्षेत्र को निर्धारित करती है। संज्ञान लेने की शक्ति (धारा 157) या जांच करने की शक्ति (धारा 156) देने वाले प्रावधान, 'जांच और मुकदमे के सामान्य स्थान' की अवधारणा के अनुसार हैं, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIII में कहा गया है।

iii. इसलिए, जिस न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के तहत अपराध किया गया था, वह जमानत और अग्रिम जमानत सहित सभी आदेश पारित करने के लिए सक्षम अधिकार क्षेत्र का न्यायालय बन जाता है। कि धारा 167 (2) की भाषा जो किसी अभियुक्त को 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में रखने के लिए न्यायिक आदेश को अनिवार्य करती है, 'निकटतम मजिस्ट्रेट' का उल्लेख

करती है न कि सक्षम अधिकार क्षेत्र के मजिस्ट्रेट का। निकटतम मजिस्ट्रेट के पास 539 का विस्तार करने की शक्ति है।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 540

15 दिन तक की अभिरक्षा में, जमानत देने की शक्ति नहीं है क्योंकि वही शक्ति केवल मजिस्ट्रेट के लिए आरक्षित है जो मुकदमे के लिए मामला करने में सक्षम है। इस संबंध में, विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि सीआरपीसी की धारा 438 के तहत गिरफ्तारी से पहले अग्रिम जमानत देने की 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' की शक्ति का उपयोग किसी ऐसे न्यायालय द्वारा नहीं किया जा सकता है जिसका क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं है। यह आगे तर्क दिया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के पाठ में उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय दोनों के लिए 'द' शब्द के उचित निर्माण का अर्थ उच्च न्यायालय या सक्षम अधिकार क्षेत्र वाला सत्र न्यायालय होगा। यह तर्क दिया गया था कि 'द' शब्द को इतना उदार निर्माण नहीं दिया जा सकता है कि यह 'किसी भी' से अप्रभेद्य हो जाए।'

iv. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने इस न्यायालय को बताया कि 1973 में दंड प्रक्रिया संहिता में अग्रिम जमानत का प्रावधान लागू होने के बाद भी, उत्तर प्रदेश जैसे कई राज्यों में दशकों से यह प्रावधान नहीं था। यह आगे बताया गया कि फोरम शॉपिंग जैसे व्यावहारिक मतभेद, अग्रिम जमानत को मौलिक अधिकार के समान मानने से उत्पन्न हो सकते हैं। यदि उच्च न्यायालय किसी ऐसे राज्य में किए गए अपराध के लिए गिरफ्तारी-पूर्व जमानत प्रदान करता है जहां अग्रिम जमानत का प्रावधान मौजूद नहीं है तो समस्या उत्पन्न होगी। इससे ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है जहां उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय को अग्रिम जमानत देने के लिए आवेदनों पर निर्णय लेते समय जांच एजेंसी के रुख या लोक अभियोजक की सहायता का लाभ नहीं मिलेगा। इसे ध्यान में रखते हुए, यह प्रस्तुत किया गया था कि उच्च न्यायालय के निर्णय, पुनः:: बिनोद रंजन

सिन्हा, **1981** एस. सी. सी. ऑनलाइन कैल **102** (इनरे: बिनोद रंजन सिन्हा), एल. आर. नायडू (डॉ.) बनाम कर्नाटक राज्य, **1983** एस. सी. सी. ऑनलाइन कर **206** (एल. आर. नायडू) और एन. के. नायर बनाम महाराष्ट्र राज्य, **1985**

सी. आर. आई. एल. जे. 1887 (एन. के. नायर), जो उनके अधिकार क्षेत्र के बाहर किए गए अपराध के लिए अग्रिम जमानत देने की अनुमति देता है, को दरकिनार कर दिया जाना चाहिए। अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए, विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधारों पर न्यायमूर्ति वी. एस. मल्लिमथ समिति की रिपोर्ट, धारा 73, पृष्ठ 121 में, प्रस्तावित किया गया था कि अग्रिम जमानत के संबंध में प्रावधान

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

दो शर्तों के अधीन रखा जाए: कि न्यायालय लोक अभियोजक को सुनेगा और अग्रिम जमानत की याचिका की सुनवाई केवल सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए।^v किसी विशेष राज्य में रहने वाले लेकिन दूसरे राज्य में पुलिस द्वारा गिरफ्तारी की आशंका वाले व्यक्तियों के लिए राहत के एक वैकल्पिक रूप के रूप में, विद्वान वरिष्ठ वकील ने इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया।

बालचंद जैन बनाम एम. पी. राज्य, **(1976) 4 एस. सी. सी. 572 (बालचंद जैन)** और सुशीला अग्रवाल बनाम दिल्ली एन. सी. टी., **(2020) 5 एस. सी. सी. 1**

(सुशीला अग्रवाल), जिसने 'पारगमन अग्रिम जमानत' और 'अंतरिम संरक्षण' के दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया, जिसने अनुच्छेद 21 में निहित जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार और अनुच्छेद 19 (1) (डी) के तहत आवाजाही की स्वतंत्रता के अधिकार को आपराधिक न्याय के प्रशासन की मौलिक योजना के साथ संतुलित किया, जैसा कि सीआरपीसी में निर्धारित किया गया है। यह प्रस्तुत किया गया था कि एक ऐसे युग में जहां एक नागरिक की आवाजाही लगातार और तेजी से होती है, एक राज्य में निवास स्थान पर दिए गए बयान के संबंध में भी गिरफ्तारी की आशंका हो सकती है, लेकिन बंद व्यक्ति दूसरे राज्य में रह रहा हो सकता है।

vi. विद्वान वरिष्ठ वकील ने आगे तर्क दिया कि कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, यह न्यायालय यह मान सकता है कि गिरफ्तारी की आशंका वाले आरोपी के निवास के निकटतम न्यायालय द्वारा सीमित अवधि के लिए अंतरिम सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। हालांकि, मंच खरीदारी को रोकने के लिए, अंतरिम सुरक्षा के अनुदान का लाभ उठाने के लिए कुछ सुरक्षा उपायों का भी सुझाव दिया गया था:

ए। व्यक्ति को यह स्थापित करने के लिए कुछ निवास प्रमाण दिखाना होगा कि वह उस क्षेत्र में रह रहा था जिसमें अंतरिम सुरक्षा मांगी गई है।

बी। यदि व्यक्ति अपने सामान्य निवास स्थान के अलावा अंतरिम सुरक्षा की मांग कर रहा है, तो उसे ऐसा करने के कारणों को बताना चाहिए और उस क्षेत्र में गिरफ्तारी की आशंका की प्रकृति का भी खुलासा करना चाहिए जहां वह नहीं रहता है।

ग. अंतरिम संरक्षण सामान्य परिस्थितियों में चौदह दिनों की अवधि से अधिक नहीं होना चाहिए।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 542

घ. न्यायालय के संबंधित लोक अभियोजक को, जिसमें अंतरिम आवेदन दायर किया जाता है, अंतरिम संरक्षण आवेदन के बारे में पहले से सूचित किया जा सकता है। लोक अभियोजक अंतरिम सुरक्षा आवेदन की प्रकृति को देखने के बाद, संबंधित पुलिस स्टेशन से संपर्क कर सकता है और किए गए अपराध की जांच के चरण और प्रकृति के बारे में जानकारी ले सकता है।

ई. एक कथित तुच्छ मामले में गिरफ्तारी से व्यक्ति की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के लिए अंतरिम संरक्षण की सीमित अवधि यह भी सुनिश्चित करेगी कि नियमित अग्रिम जमानत केवल सक्षम

अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा दी जाती है; और च।अंतरिम संरक्षण तब तक नहीं दिया जाना चाहिए जब तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत गणना की गई आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जाता है।

7.4.कर्नाटक राज्य के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 पर प्रासंगिक न्यायिक उदाहरणों को ध्यान में रखते हुए, इस मामले में एक उचित आदेश दिया जा सकता है।

7.5.श्रीमती. अभियुक्त-पति की वकील अंजना शर्मा ने निम्नानुसार प्रस्तुत किया:

आई. शिकायतकर्ता-पत्नी ने झूठे आरोपों और आरोपों के आधार पर उसके और उसके परिवार के सदस्यों के खिलाफ एक तुच्छ प्राथमिकी दर्ज कराई थी।यह आरोप लगाया जाता है कि शिकायतकर्ता-पत्नी का एकमात्र उद्देश्य पैसे की उगाही करना है क्योंकि आरोपी-पति ने रुपये की राशि देने से इनकार कर दिया था। 50,00,000-।

ii.यह कि अग्रिम जमानत आवेदन तत्काल गिरफ्तारी से सुरक्षा प्राप्त करने के लिए किए गए थे क्योंकि याचिकाकर्ता की स्वतंत्रता दांव पर थी और उसके मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए तत्काल सुरक्षा आवश्यक थी।

iii.गिरफ्तारी की आशंका कोविड-19 महामारी के अस्तित्व के दौरान थी और वह लगातार दबाव और गिरफ्तारी के खतरे में था।अभियुक्त-पति एकमात्र कमाने वाला सदस्य था, जिसका एक छोटा भाई और एक बुजुर्ग बीमार पिता था, जो अपने जीवन की सुरक्षा लेने के लिए मजबूर था और

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

अंग क्योंकि शिकायतकर्ता-पत्नी के पिता के स्थानीय संपर्क उस स्थान पर थे जहां प्राथमिकी दर्ज की गई थी, यानी, चिरावा, राजस्थान।उनकी गिरफ्तारी की एक उचित आशंका थी, जो बेंगलुरु अदालत के समक्ष आवेदन को लागू करने में मार्गदर्शक कारक था।

iv.अभियुक्त-पति के विद्वान वकील ने वर्तमान याचिका को दायर करने में देरी पर भरोसा करते हुए शिकायतकर्ता-पत्नी की वास्तविक स्थिति पर भी सवाल उठाया।यह भी तर्क दिया गया कि आरोपी पति और उसके परिवार को परेशान करने के एकमात्र उद्देश्य के साथ चिरावा पुलिस स्टेशन में प्राथमिकी दर्ज की गई थी क्योंकि कथित अपराध बेंगलुरु में किए गए थे।शिकायतकर्ता-पत्नी बेंगलुरु से पहले की तरह परिचित है, वह बेंगलुरु में मुंबई की एक कंपनी में काम कर रही थी।

विचार के लिए बिंदु:

8. संबंधित पक्षों के लिए विद्वान न्यायमित्र और वरिष्ठ वकील और वकील को सुनने के बाद और अभिलेख पर सामग्री के अवलोकन पर, निम्नलिखित बिंदु हमारे विचार के लिए सामने आएंगे:

आई. क्या उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय की सीआरपीसी की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत देने की शक्ति का प्रयोग उक्त न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर दर्ज प्राथमिकी के संबंध में किया जा सकता है?

ii. क्या पारगमन अग्रिम जमानत देने की प्रथा या अग्रिम जमानत की मांग करने वाले आवेदक को सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत आवेदन करने में सक्षम बनाने के लिए अंतरिम संरक्षण देना आपराधिक न्याय के प्रशासन के अनुरूप है?

iii. कौन सा आदेश?

उपरोक्त प्रश्नों पर एक साथ विचार किया जाएगा क्योंकि वे आपस में जुड़े हुए हैं।

कानूनी ढांचा:

9. वर्तमान अपील में विचार के लिए बिंदुओं पर चर्चा करने से पहले, सी. आर. पी. सी. के प्रासंगिक प्रावधानों को निम्नानुसार उजागर किया गया है:

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 544

543

9.1. सी. आर. पी. सी. की धारा 2 (ई) का अर्थ किसी भी राज्य के संबंध में 'उस राज्य के लिए उच्च न्यायालय' है। केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में, इसे उस राज्य के लिए उच्च न्यायालय के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसमें केंद्र शासित प्रदेश का अधिकार क्षेत्र बढ़ाया गया है। किसी अन्य केंद्र शासित प्रदेश के मामले में, इसका अर्थ है भारत के सर्वोच्च न्यायालय के अलावा उस क्षेत्र के लिए आपराधिक अपील का सर्वोच्च न्यायालय।

9.2. धारा 2 (जे) किसी न्यायालय या मजिस्ट्रेट के संबंध में "स्थानीय क्षेत्राधिकार" की अवहेलना करती है, जिसका अर्थ है वह स्थानीय क्षेत्र जिसके भीतर न्यायालय या मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। सी. आर. पी. सी. की धारा 14 में कहा गया है कि मजिस्ट्रेट के स्थानीय अधिकार क्षेत्र को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा निर्धारित सीमाओं तक सीमित किया जाएगा। सी. आर. पी. सी. की धारा 9 में आदेश दिया गया है कि राज्य सरकार उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक सत्र न्यायालय की स्थापना करेगी।

9.3. सी. आर. पी. सी. की धारा 41 ए में सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय का उल्लेख किया गया है जिसमें एक पुलिस अधिकारी को ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करने का अधिकार है जो ऐसे न्यायालय के आदेशों के अधीन गिरफ्तारी के लिए नोटिस का पालन करने में विफल रहता है। यह एक ऐसा न्यायालय है जो मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम है। धारा 167 (2) निकटतम मजिस्ट्रेट को 15 दिनों से अधिक की अवधि के लिए अभियुक्त की अभिरक्षा को अधिकृत करने का अधिकार देती है, एक बार जब उसे उसके सामने पेश किया जाता है, चाहे वह मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम अधिकार क्षेत्र का न्यायालय हो या नहीं। यदि मजिस्ट्रेट के पास मामले की सुनवाई करने या इसे मुकदमे के लिए प्रतिबद्ध करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, और वह आगे हिरासत को

अनावश्यक समझता है, तो वह आरोपी को ऐसी अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के पास भेजने का आदेश दे सकता है। धारा 156 में आगे कहा गया है कि किसी पुलिस स्टेशन का कोई भी आधिकारिक प्रभारी किसी भी संज्ञेय मामले की जांच कर सकता है, जिसे ऐसे स्टेशन की सीमा के भीतर स्थानीय क्षेत्र पर अधिकार क्षेत्र रखने वाले न्यायालय को अध्याय XIII के प्रावधानों के तहत जांच करने या मुकदमा चलाने की शक्ति होगी।

9.4.सी. आर. पी. सी. के अध्याय XIII की धारा 177 में आदेश दिया गया है कि प्रत्येक अपराध की जांच और मुकदमा सामान्य रूप से उस न्यायालय द्वारा किया जाएगा जिसके स्थानीय अधिकार क्षेत्र में यह किया गया था। स्थानीय क्षेत्रों के बारे में अनिश्चितता या अस्पष्टता के मामले में जहां एक अपराध किया गया है, धारा 178 यह अभिनिर्धारित करती है कि इसकी जांच या मुकदमा ऐसे किसी भी स्थानीय क्षेत्र पर अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जहां अपराध, या उसका हिस्सा, किया गया हो सकता है। धारा 17 में कहा गया है कि जब अंतहीन अधिनियम का परिणाम सामने आता है, तो इसकी जांच या मुकदमा किसी न्यायालय द्वारा किया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

जिसकी स्थानीय अधिकारिता में ऐसा किया गया है या ऐसा परिणाम सामने आया है।

9.5.उपरोक्त वैधानिक ढांचे को ध्यान में रखते हुए, अग्रिम जमानत देने से संबंधित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के मुख्य पहलुओं को स्पष्ट करना उचित होगा जो इस प्रकार हैं:

“438. गिरफ्तारी की आशंका वाले व्यक्ति को जमानत देने का निर्देश।-

(1) जहां किसी व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे गैर-जमानती अपराध करने के आरोप में गिरफ्तार किया जा सकता है, वह इस धारा के तहत निर्देश के लिए उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में उसे जमानत पर रिहा किया जाएगा और वह न्यायालय, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित कारकों पर विचार करने के बाद, अर्थात्:—

((i) आरोप की प्रकृति और गंभीरता;

((ख) आवेदक का पूर्ववृत्त, जिसमें यह तथ्य भी शामिल है कि क्या वह किसी संज्ञेय अपराध के संबंध में न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए जाने पर पहले कारावास से गुजरा है।

((ग) आवेदक के न्याय से भागने की संभावना; और (घ) जहां आवेदक को इस प्रकार गिरफ्तार करके उसे घायल करने या अपमानित करने के उद्देश्य से आरोप लगाया गया है, तो या तो आवेदन को तुरंत अस्वीकार कर दें या अग्रिम जमानत देने के लिए अंतरिम आदेश जारी करें।

बशर्ते कि, जहां उच्च न्यायालय या, जैसा भी मामला हो, सत्र न्यायालय ने इस उप-धारा के तहत कोई अंतरिम आदेश पारित नहीं किया है या अग्रिम जमानत देने के लिए आवेदन को खारिज कर

दिया है, तो ऐसे आवेदन में पकड़े गए आरोप के आधार पर आवेदक को वारंट के बिना गिरफ्तार करने के लिए पुलिस स्टेशन के आधिकारिक प्रभारी के लिए खुला रहेगा।

(1 ए) जहां न्यायालय उप-धारा (1) के तहत एक अंतरिम आदेश देता है, वह तुरंत सात दिन से कम के नोटिस के साथ ऐसे आदेश की एक प्रति लोक अभियोजक और पुलिस अधीक्षक को 545 देने की दृष्टि से भेजेगा।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 546

लोक अभियोजक को सुनवाई का एक उचित अवसर तब मिलता है जब आवेदन की सुनवाई न्यायालय द्वारा की जाती है।

(1 ख) अग्रिम जमानत मांगने वाले आवेदक की उपस्थिति आवेदन की अंतिम सुनवाई और न्यायालय द्वारा अंतिम आदेश पारित करने के समय अनिवार्य होगी, यदि लोक अभियोजक द्वारा उसे किए गए आवेदन पर, न्यायालय न्याय के हित में ऐसी उपस्थिति को आवश्यक समझता है।

(2) जब उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय उप-धारा (1) के तहत कोई निर्देश देता है, तो वह विशेष मामले के तथ्यों के आलोक में ऐसे निर्देशों में ऐसी शर्तें शामिल कर सकता है, जो वह समझता है कि

(i) एक शर्त कि व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर पुलिस अधिकारी द्वारा पूछताछ के लिए खुद को उपलब्ध कराएगा;

((ख) एक शर्त कि व्यक्ति, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, मामले के तथ्यों से परिचित किसी भी व्यक्ति को कोई प्रलोभन, धमकी या वादा नहीं करेगा ताकि उसे न्यायालय या किसी भी पुलिस अधिकारी को ऐसे तथ्यों का खुलासा करने से रोका जा सके।

((ग) एक शर्त कि व्यक्ति न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना भारत नहीं छोड़ेगा।

((iv) ऐसी अन्य शर्तें जो धारा 437 की उप-धारा (3) के तहत लगाई जा सकती हैं, जैसे कि उस धारा के तहत जमानत दी गई हो।(3) यदि ऐसे व्यक्ति को बाद में ऐसे आरोप पर किसी पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा वारंट के बिना गिरफ्तार किया जाता है, और गिरफ्तारी के समय या किसी भी समय जमानत देने के लिए तैयार किया जाता है, तो उसे जमानत पर रिहा कर दिया जाएगा, और यदि कोई मजिस्ट्रेट ऐसे अपराध का संज्ञान लेते हुए निर्णय लेता है कि उस व्यक्ति के खिलाफ पहली बार में वारंट जारी किया जाना चाहिए, तो वह उप-धारा (1) के तहत अदालत के निर्देश के अनुरूप जमानती वारंट जारी करेगा।(4) इस धारा में कुछ भी धारा 376 की उप-धारा (3) या धारा 376 एबी या भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376 डीए या धारा 376 डीबी के तहत अपराध करने के आरोप में किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी से जुड़े किसी भी मामले पर लागू नहीं होगा।”

9.6 सी. आर. पी. सी. की धारा 438 की मुख्य विशेषताओं को निम्नानुसार निकाला जा सकता है:

आई. यह किसी भी व्यक्ति को एक वैधानिक अधिकार प्रदान करता है जिसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे गैर-जमानती अपराध के संबंध में गिरफ्तार किया जा सकता है।

ii. वैधानिक अधिकार में उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के समक्ष इस निर्देश के लिए आवेदन करने का अधिकार शामिल है कि ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में उसे जमानत पर रिहा किया जाएगा।

iii. संसद ने अग्रिम जमानत देने के आवेदन पर विचार करते समय उन कारकों पर पर्याप्त विधायी मार्गदर्शन प्रदान किया है जो उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय का मार्गदर्शन कर सकते हैं।

iv. मूल कारकों में आरोप की प्रकृति और गंभीरता, आवेदक की आपराधिक पृष्ठभूमि, आवेदक के न्याय से फरार होने या आपराधिक न्याय प्रशासन के साथ सहयोग नहीं करने का जोखिम और आवेदक को घायल करने या अपमानित करने के उद्देश्य से बुरे विश्वास में लगाए गए आरोप की संभावना शामिल है।

v. न्यायिक विवेकाधिकार के प्रयोग का मार्गदर्शन करने वाले उपरोक्त मूल कारकों के अलावा, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 कुछ प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं को शामिल करती है। उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1) के तहत एक अंतरिम आदेश दे सकता है यदि आवेदन में तथ्य और कथन निर्धारित कारकों को संतुष्ट करते हैं। हालाँकि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1) के प्रावधान में प्रावधान है कि यदि इस तरह के अंतरिम आदेश को अस्वीकार कर दिया जाता है, तो पुलिस स्टेशन का आधिकारिक प्रभारी बिना वारंट के आवेदक को गिरफ्तार करने के लिए स्वतंत्र है। भले ही अंतरिम आदेश आवेदक के पक्ष में दिया जाता है, उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1 ए) के तहत लोक अभियोजक और पुलिस अधीक्षक को अंतरिम आदेश की एक प्रति के साथ कम से कम सात दिन का नोटिस देना अनिवार्य है, ताकि लोक अभियोजक को अदालत द्वारा आवेदन की सुनवाई के समय सुनवाई का उचित अवसर दिया जा सके। न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1 बी) से लेकर 547 तक के तहत भी अधिकार प्राप्त है।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 548

यदि न्यायालय न्याय के हित में ऐसी उपस्थिति आवश्यक समझता है तो लोक अभियोजक के आवेदन को अग्रिम जमानत की मांग करने वाले आवेदक की उपस्थिति को अंतिम सुनवाई के समय अनिवार्य बनाने की अनुमति दें।

vi. उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय को, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (2) के तहत, किसी विशेष मामले के तथ्यों के आलोक में ऐसी किसी भी शर्त को पारित करने का अधिकार है, जिसमें शामिल हैं -

क) एक शर्त कि व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर पुलिस अधिकारी द्वारा पूछताछ के लिए खुद को उपलब्ध कराएगा; ख) एक शर्त कि व्यक्ति, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, मामले के तथ्यों से परिचित किसी भी व्यक्ति को कोई प्रलोभन, धमकी या वादा नहीं करेगा ताकि उसे अदालत या किसी भी पुलिस अधिकारी को ऐसे तथ्यों का खुलासा करने से रोका जा सके;

ग) एक शर्त कि व्यक्ति न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना भारत नहीं छोड़ेगा;

घ) ऐसी अन्य शर्त जो धारा 437 की उप-धारा (3) के तहत लगाई जा सकती है, जैसे कि उस धारा के तहत जमानत दी जा रही हो।

vii. धारा 438 (3) में कहा गया है कि यदि ऐसे व्यक्ति को बाद में किसी आरोप पर पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा वारंट के बिना गिरफ्तार किया जाता है, और गिरफ्तारी के समय या किसी भी समय जमानत देने के लिए तैयार किया जाता है, तो वह जमानत पर रिहा होने का हकदार है। यदि कोई मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान लेते हुए निर्णय लेता है कि उस व्यक्ति के खिलाफ पहली बार में वारंट जारी किया जाना चाहिए, तो उसे धारा 438 (1) के तहत अदालत के निर्देश के अनुरूप जमानती वारंट जारी करने का अधिकार है।

viii. संसद ने आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 2018 के माध्यम से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 में खंड (4) जोड़ा है, जिससे यह निर्धारित किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत उपचार का सहारा किसी भी व्यक्ति द्वारा आई. पी. सी. की धारा 376 (3), 376-ए. बी., 376-डी. ए. या 376-डी. बी. के तहत अपराध करने का आरोपी नहीं लिया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

ix. महाराष्ट्र, ओडिशा, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल के राज्य विधानमंडलों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 में राज्य संशोधन लागू किए हैं।

अग्रिम जमानत की सुरक्षा का विकास:

10. श्री गुरबख्श सिंह सिबिया बनाम पंजाब राज्य, (1980) 2

एस. सी. सी. 565 (गुरबख्श सिंह सिबिया), इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने चंद्रचूड़, सी. जे. के माध्यम से बोलते हुए कहा कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ-साथ पुलिस की जांच शक्तियों को संरक्षित करने में समाज की महत्वपूर्ण भूमिका है और किसी भी समय उनका सापेक्ष महत्व राजनीतिक स्थितियों के रंग और प्रतिबंधों पर निर्भर करता है। उक्त प्रावधान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से निपटने के दौरान उक्त मामले का ध्यान था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के

दायरे का निर्धारण करते समय इन हितों को कैसे संतुलित किया जाए। 10.1. गिरफ्तारी-पूर्व या अग्रिम जमानत देने का प्रश्न उस युग में विचार के लिए आया जब दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 प्रचलन में थी और इस तरह की जमानत देने का अधिकार पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 497 और 498 द्वारा शासित था। जामिनी मलिक बनाम सम्राट, (1909) आई. एल. आर. 36 कैल 174 में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने एक ऐसे मामले पर विचार किया जिसमें प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ने हत्या के मामले में कुछ व्यक्तियों की गिरफ्तारी के लिए वारंट जारी किया था। मृतक को रात में फुटपाथ पर मृत पाया गया था और पूछताछ में कुछ अज्ञात व्यक्तियों पर संदेह था, मजिस्ट्रेट ने वारंट जारी किया जब चार व्यक्तियों पर संदेह करने वाले सबूत पेश किए गए। इसलिए, संदिग्ध व्यक्तियों ने जमानत देने के लिए कलकत्ता उच्च न्यायालय में याचिका दायर की। न्यायमूर्ति मित्रा और न्यायमूर्ति कॉक्स की खंडपीठ ने संदिग्ध व्यक्तियों को गिरफ्तारी से पहले जमानत दे दी। फैसले की शुरुआत यह टिप्पणी करते हुए की गई थी कि आम तौर पर अदालत इस तरह के मामलों में जमानत नहीं देती है, लेकिन पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 498 पर जोर देते हुए कहा कि उच्च न्यायालय पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर सकता है और किसी भी व्यक्ति को जमानत दे सकता है। यह नोट किया गया कि जमानत की राहत देने का पैमाना यह था कि क्या यह मानने के लिए उचित आधार मौजूद थे कि आरोपी अपराध के दोषी थे। यह रेखांकित किया गया कि अभियुक्त व्यक्तियों को जमानत पर रिहा करना मजिस्ट्रेट के अधिकार क्षेत्र में था, लेकिन चूंकि मजिस्ट्रेट ने एक ही अपराध के लिए चार अलग-अलग अभियुक्तों को फंसाने के लिए प्रस्तुत साक्ष्य में विसंगतियों पर विचार नहीं किया, इसलिए उच्च न्यायालय मजिस्ट्रेट की विफलता को ठीक कर सकता है।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 550

549

10.2. कलकत्ता उच्च न्यायालय के फैसले के बाद पूर्ण

हिदायत उल्ला खान बनाम में लाहौर उच्च न्यायालय की पीठ। द क्राउन,

ए. आई. आर. 1949 लाह 77 जिसमें याचिकाकर्ताओं ने आपराधिक कार्यवाही की स्थापना से आशंकित होने के कारण आशंका के कारणों को रेखांकित किया था और मुकदमे के निपटारे तक पूर्व-गिरफ्तारी जमानत की मांग की थी। याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया था कि इस तरह की गिरफ्तारी उत्पीड़न के बराबर होगी, और उनके लिए अपमान और अपमान का कारण होगी। न्यायमूर्ति कॉर्नेलियस ने रेखांकित किया कि प्रस्तावित अभियोजन सद्भावना में नहीं था और याचिकाकर्ताओं में से एक कुछ बीमारियों से पीड़ित था। क्राउन ने गिरफ्तारी की प्रत्याशा में जमानत देने की उच्च न्यायालय की क्षमता को चुनौती दी थी, और इसने एकल न्यायाधीश से पूर्ण पीठ को प्रश्न का संदर्भ दिया था। पूर्ण पीठ ने प्रश्न को इस प्रकार तैयार किया:

“क्या उच्च न्यायालय कोई राहत दे सकता है, और यदि ऐसा है, तो जमानत के आदेश की मांग करने वाले व्यक्ति को गिरफ्तारी की प्रत्याशा में क्या?”

10.3. पूर्ण पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय के पास पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 498 के तहत यह आदेश देने की शक्ति है कि जिस व्यक्ति पर किसी अपराध का संदेह है

जिसके लिए वह पुलिस अधिकारी या अदालत द्वारा गिरफ्तार किया जा सकता है, उसे जमानत पर स्वीकार किया जाएगा। पूर्ण पीठ ने पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 497 के तहत 'जमानत पर रिहा करने' के लिए पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट और पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 498 के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के बीच अंतर पर जोर दिया, ताकि 'किसी भी व्यक्ति को जमानत पर भर्ती करने का निर्देश दिया जा सके।' पूर्ण पीठ ने तर्क दिया कि एक व्यापक अभिव्यक्ति का स्पष्ट उपयोग यह दर्शाता है कि उच्च न्यायालय की शक्ति में न केवल पुलिस अधिकारियों और प्रथम उदाहरण के न्यायालयों द्वारा विवेकाधिकार के प्रयोग को संशोधित करने की शक्ति शामिल है, जहां जमानत से इनकार कर दिया गया है, बल्कि स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय में उन व्यक्तियों को जमानत देने की शक्ति भी शामिल है जिन्हें पुलिस और प्रथम उदाहरण के न्यायालय धारा 497 द्वारा जमानत देने की अनुमति नहीं देते हैं, जिनमें वे व्यक्ति भी शामिल हैं जो हिरासत में नहीं हैं। पूर्ण पीठ ने एक मारा

इस बात पर ध्यान दें कि 'ऐसे मामले अनिवार्य रूप से बेहद दुर्लभ होंगे, और अपनी प्रकृति से, किसी अधिकारी के विवेक में हस्तक्षेप करने की शक्ति जैसे कि पुलिस-अधिकारी जो शायद किसी दूरदराज के स्थान पर वैधानिक शक्तियों का प्रयोग करता है, जांच के सबसे शुरुआती चरणों में, बहुत बड़ी सावधानी के साथ प्रयोग करने की आवश्यकता होगी।' पूर्ण पीठ ने कहा कि न्यायालय ने

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

यह संतुष्ट करने की आवश्यकता है कि यदि यह तब तक अपने हाथों में रहता है जब तक कि पुलिस-अधिकारी स्वयं मामले में अपने विवेक का प्रयोग नहीं करता है और गिरफ्तारी पर जमानत देने से इनकार नहीं करता है, तो एक गंभीर या अपूरणीय गलत या अन्याय हो सकता है, साथ ही साथ न्याय के हित को संरक्षित किया जा सकता है जहां तक वे ऐसे अभियुक्त व्यक्ति के खिलाफ आरोप से संबंधित हैं।

10.4. यह देखा गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में दंड प्रक्रिया संहिता की वर्तमान धारा 438 के अनुरूप कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं था। पुरानी संहिता के तहत, विभिन्न उच्च न्यायालयों के बीच इस सवाल पर राय की एक तीखी भिन्नता थी कि क्या अदालतों के पास गिरफ्तारी की प्रत्याशा में जमानत का आदेश पारित करने की अंतर्निहित शक्ति थी, विचार की प्रमुखता यह थी कि उसके पास ऐसी शक्ति नहीं थी।

10.5. 'अग्रिम जमानत' की अवधारणा को वर्ष 1969 में 41 वें विधि आयोग की रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से स्पष्ट किया गया था, जिसमें विधि आयोग ने इस प्रकार कहा था:

“ 39.9. गिरफ्तारी से पहले जमानत पर किसी व्यक्ति की रिहाई का निर्देश देने के सुझाव (जिसे आमतौर पर 'अग्रिम जमानत' के रूप में जाना जाता है) पर हमने सावधानीपूर्वक विचार किया था।

यद्यपि अग्रिम जमानत देने की न्यायालय की शक्ति के बारे में न्यायिक राय का एक टकराव है, लेकिन बहुमत का विचार है कि संहिता के मौजूदा प्रावधानों के तहत ऐसी कोई शक्ति नहीं है।

अग्रिम जमानत देने की आवश्यकता मुख्य रूप से इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि कभी-कभी अपमानजनक व्यक्ति अपने प्रतिद्वंद्वियों को अपमानित करने के उद्देश्य से या अन्य उद्देश्यों के लिए उन्हें कुछ दिनों के लिए जेल में बंद करके झूठे कारणों में फंसाने की कोशिश करते हैं। हाल के दिनों में, राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता के बढ़ने के साथ, यह प्रवृत्ति संकेत दिखा रही है

निरंतर वृद्धि। झूठे मामलों के अलावा, जहां यह अभिनिर्धारित करने के लिए उचित आधार है कि अभियुक्त व्यक्ति के फरार होने की संभावना नहीं है, या जमानत पर रहते हुए अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करता है, तो ऐसा प्रतीत होता है कि उसे पहले हिरासत में प्रस्तुत करने, कुछ दिनों के लिए जेल में रहने और फिर जमानत के लिए आवेदन करने की आवश्यकता है।

हम इस सुझाव को स्वीकार करने की सलाह देते हैं। हमारा आगे यह विचार है कि यह विशेष शक्ति केवल उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय को प्रदान की जानी चाहिए, और यह कि आदेश गिरफ्तारी के समय या उसके बाद प्रभावी होना चाहिए।”

(हमारे द्वारा जोड़ा गया जोर)

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 552

551

10.6. इसके बाद, भारत के 48 वें विधि आयोग की रिपोर्ट, 1972

'दंड प्रक्रिया संहिता विधेयक, 1970 के तहत कुछ प्रश्न' शीर्षक से

अग्रिम जमानत देने के प्रावधान को शामिल करने के लिए विधायी प्रस्ताव पर चर्चा की गई। विधि आयोग ने इसे एक 'उपयोगी जोड़' करार देते हुए कहा कि इसका प्रयोग केवल बहुत ही असाधारण मामलों में किया जाना चाहिए। आयोग ने राय दी कि प्रारंभिक आदेश केवल एक अंतरिम आदेश होना चाहिए। राहत देने के कारणों को दर्ज किया जाना चाहिए और न्यायालय को संतुष्ट होना चाहिए कि न्याय के हित में निर्देश आवश्यक है। विधि आयोग ने यह भी विचार व्यक्त किया कि यह अनिवार्य है कि अग्रिम जमानत देने का अंतिम आदेश लोक अभियोजक को नोटिस दिए जाने के बाद ही दिया जाना चाहिए ताकि बेईमान याचिकाकर्ताओं के कहने पर कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोका जा सके।'

10.7. यह देखते हुए कि अपराधों, अपराधियों और यहां तक कि शिकायतकर्ताओं के पास कभी-कभी असाधारण विशेषताएं हो सकती हैं, गुरबख्श सिंह सिबिया में यह कहा गया था कि "जब जीवन का समान ऋण अशांत हो जाता है, तो पुलिस को राजनीतिक शत्रुता से उत्पन्न होने वाले आरोपों की जांच करने के लिए बुलाया जा सकता है।" अपराधिक कानून की शक्तिशाली प्रक्रियाओं को तब बाहरी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विकृत किया जा सकता है। इस तरह की जांच में उपस्थित रहना, जब पुलिस अपने कर्तव्य के क्षेत्र में स्वतंत्र एजेंट नहीं होती है, तो बड़ी मात्रा में असुविधा,

उत्पीड़न और अपमान होता है जो हथकड़ी में एक सम्मानित व्यक्ति की परेड का रूप भी ले सकता है, जाहिरा तौर पर न्याय के न्यायालय के रास्ते में। गलत कार्य तब किया जाता है जब एक विरोधी सामाजिक उपहास और तिरछेपन के संपर्क में आता है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कब और क्या दोषसिद्धि सुरक्षित है या बिल्कुल भी संभव है। ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए, हालांकि इन आकस्मिकताओं तक सीमित नहीं है, 1973 की संहिता में अग्रिम जमानत देने की शक्ति पेश की गई थी।

10.8. उपरोक्त सिफारिश की स्वीकृति के बाद सी. आर. पी. सी. में अग्रिम जमानत के प्रावधान को शामिल करने के बावजूद, "अग्रिम जमानत" अभिव्यक्ति सी. आर. पी. सी. में अप्रमाणित रही। बालचंद जैन के मामले में इस अदालत ने कहा कि "अग्रिम जमानत" का अर्थ है "गिरफ्तारी की प्रत्याशा में जमानत"।" इस अदालत ने खुलासा किया है कि अग्रिम जमानत के लिए आवेदन या तो प्राथमिकी दर्ज होने से पहले या उस स्तर पर किया जा सकता है जब प्राथमिकी दर्ज की जाती है लेकिन आरोप पत्र दायर नहीं किया गया है और जांच चल रही है। वैकल्पिक रूप से, जांच पूरी होने के बाद इसे स्थानांतरित किया जा सकता है। जाँच का चरण

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

अग्रिम जमानत की राहत देते समय लगाई जाने वाली शर्तों पर असर पड़ता है।

10.9. सी. आर. पी. सी. की धारा 438 के तहत गिरफ्तारी-पूर्व जमानत आदेश और सी. आर. पी. सी. की धारा 437 और 439 के तहत जमानत आदेश के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर वह चरण है जिस पर जमानत आदेश पारित किया जाता है।

11. पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले से गुरबख्श सिंह सिबिया बनाम पंजाब राज्य के मामले में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत देने में न्यायिक विवेकाधिकार की रूपरेखा पर अधिक स्पष्टता सामने आई।

पंजाब, 1977 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी एंड एच 157। पंजाब की पूर्ण पीठ और

हरियाणा उच्च न्यायालय ने जमानत के लिए आवेदन को यह कारण बताते हुए खारिज कर दिया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति एक असाधारण प्रकृति की है और इसका प्रयोग असाधारण मामलों में संयम से किया जाना चाहिए। उक्त निर्णय इस न्यायालय के समक्ष अपील में लिया गया था। इसके बाद, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने गुरबख्श सिंह सिबिया मामले में अग्रिम जमानत पर कानून को और स्पष्ट कर दिया, जहां यह पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के तर्क से असहमत था।

11.1. यह देखा गया कि चूंकि जमानत से इनकार करना व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करने के बराबर है, इसलिए न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के दायरे पर अनावश्यक प्रतिबंध लगाने के खिलाफ झुकना चाहिए, विशेष रूप से जब धारा के संदर्भ में विधायिका द्वारा नहीं

लगाया गया हो। यह देखा गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 एक प्रक्रियात्मक प्रावधान है जो उस व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता से संबंधित है, जो निर्दोष होने के अनुमान का लाभ पाने का हकदार है क्योंकि वह अग्रिम जमानत के लिए अपने आवेदन की तारीख को उस अपराध के लिए दोषी नहीं है, जिसके संबंध में वह जमानत मांगता है। सी. आर. पी. सी. की धारा 438 में नहीं पाए जाने वाले अवरोधों और शर्तों का अत्यधिक उदार निवेश इसके प्रावधानों को संवैधानिक रूप से कमजोर बना सकता है क्योंकि व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को अनुचित प्रतिबंधों के अनुपालन पर निर्भर नहीं किया जा सकता है। सी. आर. पी. सी. की धारा 438 में निहित लाभ प्रतिशत प्रावधान को सहेजा जाना चाहिए, न कि हटा दिया जाना चाहिए। अग्रिम जमानत देने के लिए विचार पर उक्त निर्णय के पैराग्राफ 31 में चर्चा की गई थी जो निम्नानुसार है:

“31. अग्रिम जमानत के संबंध में, यदि प्रस्तावित आरोप न्याय के उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से नहीं, बल्कि किसी गुप्त उद्देश्य से प्रतीत होता है, तो उद्देश्य आवेदक को गिरफ्तार करके घायल करना और अपमानित करना है, 553 पर आवेदक की रिहाई के लिए एक निर्देश

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 554

आम तौर पर उसकी गिरफ्तारी की स्थिति में जमानत दी जाती थी। दूसरी ओर, यदि यह संभावना प्रतीत होती है कि आवेदक की पूर्ववृत्तियों पर विचार करते हुए, कि अग्रिम जमानत के आदेश का लाभ उठाते हुए वह न्याय से वंचित हो जाएगा, तो ऐसा आदेश नहीं दिया जाएगा। लेकिन इन प्रस्तावों का विपरीत आवश्यक रूप से सच नहीं है। कहने का अर्थ यह है कि यह एक अक्षम्य नियम के रूप में निर्धारित नहीं किया जा सकता है कि अग्रिम जमानत तब तक नहीं दी जा सकती जब तक कि प्रस्तावित आरोप दुर्भावना से प्रेरित प्रतीत नहीं होता है और समान रूप से, यदि कोई डर नहीं है कि आवेदक फरार हो जाएगा तो अग्रिम जमानत दी जानी चाहिए। कई अन्य विचार हैं, जिनकी गणना करने के लिए बहुत अधिक संख्या है, जिनके संयुक्त प्रभाव को अग्रिम जमानत देते या अस्वीकार करते समय न्यायालय के साथ तोलना चाहिए। प्रस्तावित आरोपों की प्रकृति और गंभीरता, उन घटनाओं का संदर्भ जिनके कारण आरोप लगाए जाने की संभावना है, मुकदमे में आवेदक की उपस्थिति सुनिश्चित नहीं होने की एक उचित संभावना, एक उचित आशंका कि गवाहों के साथ छेड़छाड़ की जाएगी और "जनता या राज्य के व्यापक हित" कुछ ऐसे विचार हैं जिन्हें अदालत को अग्रिम जमानत के लिए आवेदन पर निर्णय लेते समय ध्यान में रखना होगा।”

11.2. इस बारे में विचार के मूल्यांकन के सवाल पर कि क्या आवेदक के फरार होने की संभावना है, यह देखा गया कि इस बात की कोई धारणा नहीं हो सकती है कि अमीर और शक्तिशाली खुद को मुकदमे के लिए प्रस्तुत करेंगे और विनम्र और गरीब न्याय के मार्ग से भाग जाएंगे, इससे अधिक यह धारणा हो सकती है कि पहले वाले के अपराध करने की संभावना नहीं है और बाद वाले के अपराध करने की अधिक संभावना है। अंततः, संविधान पीठ ने पैराग्राफ 35 से 39 में निम्नलिखित बिंदुओं को स्पष्ट किया जो निम्नानुसार निकाले गए हैं:

“35. संहिता की धारा 438 (1) एक शर्त निर्धारित करती है जिसे अग्रिम जमानत दिए जाने से पहले संतुष्ट किया जाना चाहिए। आवेदक को यह दिखाना होगा कि उसके पास "विश्वास करने का कारण”

है कि उसे गैर-जमानती अपराध के लिए गिरफ्तार किया जा सकता है।"विश्वास करने का कारण" अभिव्यक्ति के उपयोग से पता चलता है कि यह विश्वास कि आवेदक को इस तरह से गिरफ्तार किया जा सकता है, उचित आधारों पर आधारित होना चाहिए।केवल 'भय' 'विश्वास' नहीं है, इस कारण से आवेदक के लिए यह दिखाना पर्याप्त नहीं है कि उसे किसी प्रकार की अस्पष्ट आशंका है कि कोई उसके खिलाफ आरोप लगाने जा रहा है, जिसके अनुसरण में उसे गिरफ्तार किया जा सकता है।इन आधारों

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

जिस पर आवेदक का विश्वास है कि उसे गैर-जमानती अपराध के लिए गिरफ्तार किया जा सकता है, वह न्यायालय द्वारा निष्पक्ष रूप से जाँच किए जाने में सक्षम होना चाहिए, क्योंकि केवल तभी न्यायालय यह निर्धारित कर सकता है कि क्या आवेदक के पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे इस तरह से गिरफ्तार किया जा सकता है।इसलिए, धारा 438 (1) को अस्पष्ट और सामान्य आरोपों के आधार पर लागू नहीं किया जा सकता है, जैसे कि किसी संभावित गिरफ्तारी के खिलाफ स्थायी रूप से खुद को हथियार देने के लिए।अन्यथा, अग्रिम जमानत के लिए आवेदनों की संख्या उतनी ही बड़ी होगी जितनी कि, किसी भी तरह से, वयस्क आबादी।अग्रिम जमानत व्यक्ति की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने का एक उपकरण है; यह न तो अपराध करने के लिए पासपोर्ट है और न ही किसी भी और सभी प्रकार के आरोपों के खिलाफ ढाल है, जो संभावित या असंभव है।

36. दूसरा, यदि उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय में अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया जाता है, तो उसे इस प्रश्न पर अपना दिमाग लगाना चाहिए और यह तय करना चाहिए कि क्या ऐसी राहत देने के लिए कोई मामला बनाया गया है।यह संहिता की धारा 437 के तहत संबंधित मजिस्ट्रेट के निर्णय पर सवाल नहीं छोड़ सकता है, जब भी कोई अवसर आता है।इस तरह का पाठ्यक्रम धारा 438 के उद्देश्य को ही विफल कर देगा। 37.तीसरा, प्रथम सूचना रिपोर्ट की भाषा धारा 438 के तहत शक्ति के प्रयोग की पूर्व शर्त नहीं है।एक उचित विश्वास पर आधारित संभावित गिरफ्तारी की निकटता को अस्तित्व में दिखाया जा सकता है, भले ही एक प्राथमिकी अभी तक दर्ज नहीं की गई हो।

38. चौथा, जब तक आवेदक को गिरफ्तार नहीं किया गया है, तब तक प्राथमिकी दर्ज होने के बाद भी अग्रिम जमानत दी जा सकती है।

39. पाँचवाँ, अभियुक्त की गिरफ्तारी के बाद धारा 438 के प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सकता है।गिरफ्तारी के तहत एक आरोपी को "अग्रिम जमानत" देने में संदर्भों में विरोधाभास शामिल है, जहां तक उस अपराध या अपराध का संबंध है जिसके लिए उसे गिरफ्तार किया गया है।गिरफ्तारी के बाद, अभियुक्त को संहिता की धारा 437 या धारा 439 के तहत अपना उपचार लेना चाहिए, यदि वह उस अपराध या अपराध के संबंध में जमानत पर रिहा होना चाहता है जिसके लिए उसे गिरफ्तार किया गया है।”

11.3. अदालतों को अग्रिम जमानत का आदेश देने के खिलाफ आगाह करते हुए ताकि किसी भी और हर तरह की कथित गैरकानूनी गतिविधि या घटना को कवर या संरक्षित किया जा सके, यह देखा गया कि आवेदक द्वारा गिरफ्तारी की वास्तविक आशंका होनी चाहिए और कुछ 555 होना चाहिए।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 556

जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि आवेदक की गिरफ्तारी की आशंका वास्तविक है। अन्यथा, अग्रिम जमानत का एक व्यापक आदेश जांच के मामले में पुलिस के अधिकार और कर्तव्य दोनों में गंभीर हस्तक्षेप करने के लिए बाध्य है क्योंकि इस बात की परवाह किए बिना कि आवेदक द्वारा किस तरह का अपराध किया गया है, जब जमानत का आदेश किसी भी विवरण की कथित रूप से गैरकानूनी गतिविधि को समझता है, तो यह पुलिस को आवेदक को गिरफ्तार करने से रोक देगा, भले ही वह जनता की उपस्थिति में हत्या करता हो। इसलिए, अग्रिम जमानत देने वाले न्यायालय को इस बात को निर्दिष्ट करने का ध्यान रखना चाहिए कि केवल किस संबंध में आदेश प्रभावी होगा। शक्ति का प्रयोग निर्वात में नहीं किया जाना चाहिए।

12. इस सवाल पर निर्णय देते हुए कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत दिया गया संरक्षण एक निश्चित अवधि तक सीमित होना चाहिए ताकि व्यक्ति निचली अदालत के समक्ष आत्मसमर्पण कर सके या नहीं, सुशीला अग्रवाल में इस अदालत की एक संविधान पीठ ने बाद के सैद्धांतिक विकास के साथ-साथ भारत के विधि आयोग की रिपोर्टों पर भी ध्यान दिया। इस मामले में संवैधानिक पीठ ने दो प्रश्नों पर विचार किया: 1. क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत किसी व्यक्ति को दिया गया संरक्षण एक निश्चित अवधि तक सीमित होना चाहिए ताकि वह व्यक्ति निचली अदालत के समक्ष आत्मसमर्पण कर सके और नियमित जमानत ले सके? 2. क्या अग्रिम जमानत आदेश का जीवन उस समय और चरण में समाप्त होना चाहिए जब अभियुक्त को अदालत द्वारा तलब किया जाता है? 12.1. प्रथम प्रश्न के संबंध में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत किसी व्यक्ति को दिया गया संरक्षण निश्चित रूप से एक निश्चित अवधि तक सीमित नहीं होना चाहिए; इसे समय पर किसी भी प्रतिबंध के बिना अभियुक्त के पक्ष में सुनिश्चित करना चाहिए। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (2) के साथ पठित धारा 437 (3) के तहत सामान्य शर्तें लागू की जानी चाहिए। यदि किसी अपराध के संबंध में विशिष्ट तथ्य या विशेषताएँ हैं, तो न्यायालय के लिए कोई भी उचित शर्त (राहत की प्रकृति सहित, या इसे किसी घटना से जोड़ा जाना), आदि लागू करने का अधिकार है।

12.2. जहाँ तक इस न्यायालय को निर्दिष्ट दूसरे प्रश्न का संबंध है, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अग्रिम जमानत आदेश का जीवन या अवधि सामान्य रूप से उस समय और चरण में समाप्त नहीं होती है जब अभियुक्त को न्यायालय द्वारा तलब किया जाता है, या जब आरोप बनाए जाते हैं, लेकिन मुकदमे के अंत तक जारी रह सकता है। फिर से, अगर वहाँ

यदि कोई विशेष या विशिष्ट विशेषताएँ हैं जो न्यायालय को अग्रिम जमानत की अवधि को सीमित करने के लिए आवश्यक बनाती हैं, तो ऐसा करना उसके लिए खुला है।

12.3 निम्नलिखित स्पष्टीकरण भी जारी किए गए थे जिन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए: “क) जब अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया जाता है, तो यह ठोस तथ्यों (और अस्पष्ट या सामान्य आरोपों पर नहीं) पर आधारित होना चाहिए जो एक या अन्य विशिष्टता से संबंधित हो। आवेदन में अपराध से संबंधित आवश्यक तथ्य होने चाहिए, और आवेदक को गिरफ्तारी क्यों उचित रूप से स्वीकार की जाती है, साथ ही कहानी का उसका पक्ष भी होना चाहिए। यह खतरे या आशंका, इसकी गंभीरता या गंभीरता और किसी भी शर्त की उपयुक्तता का मूल्यांकन करने के लिए आवश्यक है जिसे लागू करना पड़ सकता है। जब तक तथ्य स्पष्ट हैं और गिरफ्तारी की आशंका के लिए उचित आधार है, तब तक प्राथमिकी दर्ज करने से पहले एक आवेदन दायर किया जाना चाहिए।

ख) न्यायालय के लिए यह सलाह दी जाती है कि वह लोक अभियोजक को नोटिस जारी करे और सीमित अंतरिम अग्रिम जमानत देते समय भी तथ्य प्राप्त करे।

ग) सी. आर. पी. सी. की धारा 438 में कुछ भी, अदालतों को जांच या जांच आदि के दौरान पुलिस द्वारा समय के संदर्भ में, या एफ. आई. आर. की भाषा पर, या किसी भी गवाह का बयान दर्ज करने पर सीमित राहत देने के लिए मजबूर या बाध्य नहीं करता है। न्यायालय को अपराध की प्रकृति, व्यक्ति की भूमिका, उसकी जांच के क्रम को बढ़ाने की संभावना, या साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ (गवाहों को डराने सहित), न्याय पाने की संभावना (जैसे देश छोड़ने), आदि पर विचार करना होगा। धारा 438 (2) के आधार पर, न्यायालयों को न्यायसंगत ठहराया जाएगा और धारा 437 (3) में उल्लिखित शर्तों को लागू करना चाहिए। अग्रिम जमानत के अनुदान को सीमित करने वाली शर्तें मामले के तथ्यों के आधार पर लागू की जा सकती हैं, लेकिन हमेशा लागू नहीं की जा सकती हैं।

घ) न्यायालयों को आम तौर पर अपराध की प्रकृति और गंभीरता, आवेदक की भूमिका और मामले के तथ्यों जैसे विचारों द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए। देना है या नहीं, यह विवेकाधिकार का विषय है और इसी तरह अगर जमानत दी जानी है, तो 557

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 558 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 15 एस. सी. आर.

किस प्रकार की शर्तें लगाई जानी हैं या नहीं लगाई जानी हैं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है और न्यायालय के विवेकाधिकार के अधीन है।

ड) अभियुक्त के आचरण और व्यवहार के आधार पर दी गई अग्रिम जमानत, मुकदमे के अंत तक आरोप पत्र के अंतिम चरण के बाद जारी रह सकती है।

च) अग्रिम जमानत का आदेश इस अर्थ में व्यापक नहीं होना चाहिए कि यह अभियुक्त को आगे अपराध करने और गिरफ्तारी से अनिश्चितकालीन संरक्षण की राहत का दावा करने में सक्षम नहीं बनाता है। इसे किसी घटना से संबंधित विशेष अपराध या अपराध के लिए माना जाना चाहिए, जिसके लिए गिरफ्तारी की आशंका मांगी जाती है। यह भविष्य की किसी घटना के संबंध में काम नहीं कर सकता है जिसमें एक आकस्मिक घटना शामिल है।

छ) अग्रिम जमानत का अनुदान किसी भी तरह से उस व्यक्ति के खिलाफ आरोपों की जांच करने के लिए पुलिस या जांच एजेंसी के अधिकारों या कर्तव्यों को सीमित या प्रतिबंधित नहीं करता है जो गिरफ्तारी से पहले जमानत चाहता है और उसे दिया जाता है।

ज) सीमित के बारे में गुरबख्श सिंह सिबिया की टिप्पणियाँ

साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के संदर्भ में अभिरक्षा या मानित अभिरक्षा, अभियुक्त को अलग से आत्मसमर्पण करने और नियमित जमानत लेने की आवश्यकता नहीं है।

i) पुलिस या जांच एजेंसी के लिए यह खुला है कि वह किसी भी अवधि के उल्लंघन की स्थिति में आरोपी को गिरफ्तार करने के लिए धारा 439 (2) के तहत निर्देश के लिए संबंधित अदालत का रुख करे, जैसे कि फरार होना, जांच के दौरान सहयोग न करना, चोरी, धमकी या गवाहों को प्रलोभन देना ताकि जांच या मुकदमे के परिणाम को भड़काया जा सके।

जे) जमानत देने वाले आदेश की शुद्धता पर राज्य या जांच एजेंसी के कहने पर अपीलीय या उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है, और इसे इस आधार पर दरकिनार किया जा सकता है कि इसे देने वाले न्यायालय ने भौतिक तथ्यों या महत्वपूर्ण परिस्थितियों पर विचार नहीं किया है। यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 (2) के संदर्भ में रद्द करने के बराबर नहीं है।

के) सिद्धराम सतलिंगप्पा मेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य में,

(2011) 1 एस. सी. सी. 694 (और इसी तरह के अन्य निर्णय) में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अग्रिम जमानत देते समय कोई भी प्रतिबंधात्मक शर्तें लागू नहीं की जा सकती हैं। इसी तरह, निर्णय

सलाउद्दीन अब्दुलसमद शेख बनाम महाराष्ट्र राज्य में,

(1996) 1 एस. सी. सी. 667 और बाद के निर्णय जो प्रतिबंधात्मक शर्तों को निर्धारित करते थे, या अग्रिम जमानत के अनुदान को सीमित करने वाली शर्तों को एक समय की अवधि के लिए खारिज कर दिया गया था।”

13. नाथू सिंह के मामले में, शिकायतकर्ताओं ने इलाहाबाद में उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती देते हुए एक विशेष अनुमति याचिका का नेतृत्व किया, जिसने अभियुक्त के नेतृत्व में अग्रिम जमानत याचिका को खारिज कर दिया और उन्हें निचली अदालत के समक्ष आत्मसमर्पण करने और

नियमित जमानत लेने के लिए 90 दिन का समय देने पर, उन्हें 90 दिनों की उक्त अवधि के दौरान दंडात्मक कार्रवाई से सुरक्षा प्रदान की।

13.1. अदालत ने सुशीला अग्रवाल के मामले में संविधान पीठ के फैसले को संदर्भित करने के बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1) के प्रावधान पर विचार किया और कहा कि प्रावधान कोई अधिकार या प्रतिबंध नहीं बनाता है। यह प्रकृति में केवल क्लेरिफ़ी कैटरी है। अदालत ने तब इस सवाल पर विचार किया कि क्या अग्रिम जमानत की मांग करने वाले आवेदन को खारिज करते समय, आवेदक द्वारा कुछ समय के लिए सुरक्षा की मांग करने वाली याचिका क्योंकि वह अपने परिवार के सदस्यों की प्राथमिक देखभाल करने वाला या कमाने वाला है और उनके लिए व्यवस्था करने की आवश्यकता है और इसलिए भले ही अग्रिम जमानत देने के लिए एक सख्त मामला नहीं बनाया गया है, और बल्कि, जहां जांच प्राधिकरण ने अभिरक्षा जांच के लिए मामला बनाया है, क्या अदालत सीमित अवधि के लिए गिरफ्तारी के खिलाफ सुरक्षा देने के लिए अपने विवेक का प्रयोग कर सकती है। यह देखा गया कि यदि इस तरह के आदेश को पारित करना है, तो इसे जांच प्राधिकरण की चिंताओं को ध्यान में रखते हुए आवेदक के हितों की रक्षा के लिए संकीर्ण रूप से तैयार किया जाना चाहिए और इसका समर्थन कारणों से किया जाना चाहिए।

13.2. यह अभिनिर्धारित किया गया कि उच्च न्यायालय के विवादित आदेश में, उसने बिना कोई कारण बताए गिरफ्तारी से संरक्षण नहीं देकर अपराध की प्रकृति और गंभीरता के आधार पर अग्रिम जमानत की मांग करने वाले आवेदन को खारिज कर दिया था। दूसरा, 90 दिनों की अवधि के लिए राहत देने में जांच एजेंसी, शिकायतकर्ता या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1) के तहत प्रावधान की चिंताओं को ध्यान में नहीं रखा गया, जो कि 559 है।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 560

यह आवश्यक करता है कि न्यायालय कम से कम अवधि के लिए ऐसा असाधारण विवेकाधीन संरक्षण आदेश पारित करे जो उचित रूप से आवश्यक है। 90 दिन या तीन महीने की अवधि एक अनुचित अवधि है। इसलिए, विवादित आदेशों को दरकिनार कर दिया गया और जांच एजेंसी को कानून के अनुसार मामलों को आगे बढ़ाने और जांच पूरी करने के लिए खुला छोड़ दिया गया। यदि आवेदक इस बीच न्यायिक हिरासत में थे, तो आदेश में की गई टिप्पणियों के बिना, नियमित जमानत के लिए उनके आवेदनों पर सक्षम न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता था।

14. अग्रिम जमानत के विषय पर न्यायिक सामग्री की पूरी श्रृंखला और इसके दुरुपयोग की धारणा पर विचार करने के बाद, सुशीला अग्रवाल की संविधान पीठ ने इस न्यायालय के उन फैसलों को माना जो अग्रिम जमानत देने पर अधिक सीमाओं को उचित कानून नहीं मानते हैं। 15. उपरोक्त चर्चा का परिणाम यह है कि आपराधिक कानून का मार्ग एक समान उपचार की दिशा में रहा है जो आपराधिक कानून के प्रभावी प्रशासन के साथ व्यक्तिगत स्वतंत्रता की अनिवार्यता के बीच एक नाजुक संतुलन बनाता है।

16. इस न्यायालय ने अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत देने की चुनौती को स्वीकार करते हुए निम्नलिखित दो मामलों में कानून के सवाल को खुला रखा था:

(i) ब्रोजन गोगोल में, इस न्यायालय ने बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा गुवाहाटी में किए गए अपराधों में कथित रूप से शामिल एक आरोपी को अग्रिम जमानत देने के लिए असम पुलिस की चुनौती पर विचार किया। तदनुसार, इसने अभिनिर्धारित किया कि अग्रिम जमानत याचिका गुवाहाटी उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की जानी चाहिए क्योंकि कथित गतिविधियों को उसके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर अंजाम दिया गया था। नतीजतन, इस अदालत ने इस आधार पर अग्रिम जमानत देने वाले बॉम्बे उच्च न्यायालय के विवादित आदेश को रद्द कर दिया कि अभियोजन एजेंसी की बात नहीं सुनी गई थी। हालाँकि, इस न्यायालय ने माना कि यह निर्णय लेना आवश्यक नहीं है कि क्या बॉम्बे उच्च न्यायालय के पास अग्रिम जमानत याचिका पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब तक गुवाहाटी उच्च न्यायालय अग्रिम जमानत याचिका पर उचित आदेश (ओं) पारित नहीं करता, तब तक यथास्थिति बनी रहेगी।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

(ii) इस न्यायालय को तीस्ता पर निर्णय लेने का अवसर भी मिला था।

अतुल सीतलवाड़ बनाम महाराष्ट्र राज्य, विशेष अवकाश याचिका

(आपराधिक) 2014 का सं. 1770, जिसके तहत अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत की मांग करने वाले आवेदक ने बॉम्बे उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ अपील की थी। बंबई उच्च न्यायालय ने अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत के लिए आवेदक को उक्त राहत के लिए गुजरात में उपयुक्त अदालत के समक्ष जाने की अनुमति दी थी और चार सप्ताह के लिए पारगमन जमानत दी थी ताकि इसे सक्षम किया जा सके। इस न्यायालय ने बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले में हस्तक्षेप किए बिना 2014 की विशेष अनुमति याचिका संख्या 1770 का निपटारा करते हुए कहा कि उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के बारे में कानून के सवाल को खुला रखा गया था।

(iii) इसलिए, वर्तमान अपील उन मामलों में से तीसरी है जहां अपीलार्थी, जो शिकायतकर्ता है, द्वारा इस न्यायालय के समक्ष सार्वजनिक महत्व का यह महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया है।

चर्चा:

17. आगे बढ़ने से पहले, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत देने पर उच्च न्यायालय के कुछ फैसलों के तर्क और परिणाम को निम्नानुसार सारणीबद्ध किया गया है:

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
------------	---------------	----------------

1. प्रीतम सिंह बनाम पंजाब राज्य, 1980 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 336 (प्रीतम सिंह)	पंजाब राज्य में दर्ज प्राथमिकी के संबंध में दिल्ली उच्च न्यायालय	उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत आरोपी की याचिका को स्वीकार कर लिया और निर्देश दिया कि व्यक्तिगत मुचलका और मुचलका जमा करने पर गिरफ्तारी की स्थिति में आरोपी को रिहा कर दिया जाए। यह तर्क दिया गया था कि किसी अपराध के संज्ञान से संबंधित अधिकार क्षेत्र को जमानत देने के साथ मिलाने की आवश्यकता नहीं है। जमानत गिरफ्तारी और हिरासत के खिलाफ होती है। इसलिए, एक उपयुक्त न्यायालय जिसके अधिकार क्षेत्र में गिरफ्तारी होती है या जिसे पकड़ा जाता है या जिस पर विचार किया जाता है, उसके पास संबंधित व्यक्ति को जमानत देने का अधिकार क्षेत्र भी होगा। यदि सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय के पास अंतरिम जमानत देने का अधिकार क्षेत्र है, तो पूर्ण अग्रिम जमानत देने की शक्ति उसी अधिकार क्षेत्र से निकलेगी।
---	---	--

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस.

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
		विभिन्न राज्यों में स्थित न्यायालयों में समवर्ती अधिकार क्षेत्र दंड प्रक्रिया संहिता के दायरे से बाहर नहीं है। सी. आर. पी. सी. की धारा 438 के तहत अधिकारिता को अंतरिम और न्यायिक में विभाजित करना संभव नहीं है, लेकिन यदि यह इतना समीचीन या वांछनीय है, तो यह किसी भी न्यायालय के लिए अनुमत है, जो संज्ञान लेने और मुकदमा चलाने के लिए सक्षम है और जमानत देने के लिए सक्षम न्यायालय भी केवल एक विशिष्ट अवधि के लिए अग्रिम जमानत दे सकते हैं। एच एच
2. इनरे: बिनोद रंजन सिन्हा, 1981 एस. सी. सी. ऑनलाइन कैल 102 (इन. आर. ई.: बिनोद रंजन सिन्हा)	बिहार राज्य में दर्ज प्राथमिकी के संबंध में कलकत्ता उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने उसमें याचिकाकर्ता को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत राहत प्रदान की और तर्क दिया कि उसके पास उक्त न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में रहने वाले याचिकाकर्ता की अग्रिम जमानत के लिए आवेदन पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है, हालांकि वह एक मामले के संबंध में गिरफ्तारी की आशंका करता है

		जो इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के बाहर शुरू किया गया है।
3. एल. आर. नायडू (डॉ.) बनाम। कर्नाटक राज्य, 1983 एस. सी. सी. ऑनलाइन कर 206 (एल. आर. नायडू)	केरल राज्य में दर्ज प्राथमिकी के संबंध में कर्नाटक उच्च न्यायालय	अग्रिम जमानत आवेदक को गिरफ्तारी से इस निर्देश के साथ सुरक्षा प्रदान की गई थी कि भविष्य में गिरफ्तारी के बाद उसे 5 लाख रुपये के मुचलके पर जमानत पर रिहा किया जाएगा। 3, 000/- पुलिस की संतुष्टि के लिए इतनी ही राशि के मुचलके के साथ। उन्हें कन्नौर पुलिस द्वारा गिरफ्तारी की तारीख से बीस दिनों के भीतर केरल राज्य में उपयुक्त अदालत का दरवाजा खटखटाने का निर्देश दिया गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि उसने ऊपर निर्दिष्ट समय के भीतर ऐसा कोई आवेदन किया है, तो अग्रिम जमानत का आदेश उस समय तक लागू रहेगा जब तक कि वह न्यायालय कोई आदेश पारित नहीं कर देता। यदि याचिकाकर्ता कोई आवेदन नहीं करता है तो आदेश उसके बाद यानी उसकी गिरफ्तारी के 21 वें दिन से लागू नहीं होगा।

ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 562 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 15 एस. सी. आर.

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
4. सी एल मैथ्यू बनाम भारत सरकार, 1984 एस. सी. सी. ऑनलाइन केर 207 (सी. एल. मैथ्यू)	जमशेदपुर, बिहार में किए गए अपराधों के संबंध में केरल उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने अग्रिम जमानत दे दी। इसमें उल्लेख किया गया है कि एक राज्य में गैर-कानूनी कार्य किया जा सकता है और आवेदक दूसरे राज्य में रह सकता है या उसका कई राज्यों में निवास हो सकता है। अपराध करने के बाद दूसरे राज्य में अपने निवास स्थान पर पहुंचने से पहले उसे गिरफ्तार किया जा सकता है। यह नहीं हो सकता है कि वह प्रत्येक उच्च न्यायालय से अग्रिम जमानत के आदेशों से लैस हो सकता है; यह भी नहीं हो सकता है कि एक ही अपराध के संबंध में और उसी के संबंध में विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा परस्पर विरोधी आदेश जारी किए जाते हैं। इसलिए अनुच्छेद 21 और 22 के तहत संवैधानिक गारंटी, आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों और भारत में उच्च न्यायालयों को प्रदत्त अधिकार क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए एक संतुलन बनाया जाना चाहिए। यह निष्कर्ष निकाला गया कि राज्य के उच्च न्यायालय को अग्रिम जमानत की राहत के दायरे को उस राज्य के

		भीतर की गई गिरफ्तारी तक सीमित करना होगा। इस प्रकार राज्य के बाहर की गई गिरफ्तारी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत एक आदेश द्वारा तब तक संरक्षित नहीं किया जाएगा जब तक कि अपराध को राज्य के भीतर किए जाने का आरोप नहीं लगाया जाता है।
5. एन. के. नायर बनाम महाराष्ट्र राज्य, 1985 सी. आर. आई एल. जे. 1887 (एन. के. नायर)	हरियाणा में दर्ज एक प्राथमिकी के संबंध में बॉम्बे उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने 'गिरफ्तारी की आशंका' अभिव्यक्ति पर जोर दिया और कहा कि यदि गिरफ्तारी उच्च न्यायालय से परे किसी क्षेत्राधिकार के भीतर की जाने की संभावना है, तो संबंधित व्यक्ति अग्रिम जमानत के लिए उच्च न्यायालय में आवेदन कर सकता है, भले ही अपराध किसी अन्य राज्य में किया गया हो।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस.

563

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
6. सैयद ज़फ़रुल हसन बनाम राज्य, 1986 एस. सी. ऑनलाइन पैट 3 (सैयद ज़फ़रुल	झिंकपानी पुलिस थाने में दर्ज प्राथमिकी के संबंध में पटना उच्च न्यायालय की पटना पीठ, जो	उच्च न्यायालय ने राहत देने से इनकार कर दिया और तर्क दिया कि सेक के तहत एक आवेदन।

हसन)	सिंहभूम जिले में आती है और पूरी तरह से पटना उच्च न्यायालय की रांची पीठ के अधिकार क्षेत्र में आती है।	अधिकारिता के अभाव में किसी अन्य क्षेत्र में किए गए अपराधों के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 पर विचार नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के 'जानबूझकर तैयार किए गए वाक्यांश' पर जोर दिया और तर्क दिया कि 'उच्च न्यायालय' या 'सत्र न्यायालय' को 'किसी भी उच्च न्यायालय' या 'किसी भी सत्र न्यायालय' के साथ नहीं जोड़ा जा सकता है। इस बात से इनकार करते हुए कि 'द' शब्द को 'किसी भी' के साथ प्रतिस्थापित किया जा सकता है, उच्च न्यायालय ने तर्क दिया कि इस तरह का प्रतिस्थापन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 की 'विशिष्ट भाषा के लिए स्पष्ट हिंसा' करना होगा।
7. शैलेश जैसवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1998 एस. सी. सी. ऑनलाइन कैल 215 (शैलेश जैसवाल)	कलकत्ता उच्च न्यायालय	कलकत्ता उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि सेक के तहत एक आवेदन। अधिकारिता के अभाव में किसी अन्य राज्य में किए गए अपराधों के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 पर

		विचार नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय ने तर्क दिया कि किसी भी अन्य न्यायालय अर्थात् उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं से परे अग्रिम जमानत के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग संक्रमणकालीन अवधि के लिए जमानत पर विचार करने की सीमा तक सीमित है। तदनुसार, अग्रिम जमानत की राहत से इनकार कर दिया लेकिन पारगमन अग्रिम जमानत दे दी।
8. साधन चंद्र कोले बनाम राज्य, 1998 एस. सी. सी. ऑनलाइन कैल 382 (साधन चंद्र कोले)	पश्चिम बंगाल राज्य के बाहर किए गए अपराध के संबंध में कलकत्ता उच्च न्यायालय।	न्यायालय ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद 214 को ध्यान में रखते हुए, किसी विशेष राज्य के विशेष उच्च न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता का विस्तार सामान्य रूप से किसी अन्य राज्य के क्षेत्र में नहीं किया जाएगा और राज्य के बाहर किसी भी मामले के संबंध में किसी भी शक्ति या अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कानून द्वारा प्रदत्त शक्ति से अधिक होगा।

ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 564 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 15 एस. सी. आर.

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
		सी. आर. पी. सी.

की धारा 438 केवल सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय को पुलिस द्वारा गिरफ्तारी की स्थिति में अग्रिम जमानत देने के लिए विशेष शक्तियां प्रदान करती है। इस प्रावधान के पीछे विधायी इरादा एक निर्दोष नागरिक या नागरिकों के वर्ग के पुलिस द्वारा अनुचित उत्पीड़न को रोकना है। जहाँ तक सत्र न्यायालय का संबंध है, इसकी शक्ति सत्र-विभाग के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र तक सीमित है और यह अपने सत्र-विभाग के बाहर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि सत्र न्यायाधीश को सत्र-मंडल के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं से परे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति या अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं है। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि किसी भी आउट-स्टेशन में अग्रिम जमानत के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत की याचिका पर उच्च

		न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया जा सकता है और इसलिए याचिका विचारणीय नहीं है।
9. हनी प्रीत इंसा बनाम राज्य, 2017 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 10690 (हनी प्रीत इंसा)	हरियाणा राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में दिल्ली उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने कहा कि हरियाणा के सिरसा के निवासी आवेदक ने सिरसा पते के अलावा दिल्ली का पता देकर दिल्ली की एक अदालत से अग्रिम जमानत मांगी थी। उच्च न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि यह विचार करना कर्तव्य है कि क्या आवेदक उस न्यायालय की स्थानीय सीमाओं के भीतर किसी स्थान का नियमित या वास्तविक निवासी है और आवेदन कानून की प्रक्रिया से बचने के लिए एक छद्म आयु नहीं है। यदि न्यायालय इस पहलू पर संतुष्ट नहीं होता है, तो आवेदन मामले के गुण-दोष में गए बिना खारिज किए जाने योग्य है।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस.

565

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
		उच्च न्यायालय ने तीन सप्ताह की अवधि के लिए पारगमन अग्रिम जमानत की याचिका को भी खारिज कर दिया

		ताकि आवेदक पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय का रुख कर सके। उच्च न्यायालय ने तर्क दिया कि आवेदक फरार था और उसके वकील ने अंतरिम सुरक्षा दिए जाने पर जांच में शामिल होने से इनकार कर दिया था। इसलिए, उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि आवेदन वास्तविक नहीं है और समय प्राप्त करने की दृष्टि से दायर किया गया है।
10. तीस्ता अतुल सीतलवाड़ बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए. बी. ए. No.14/2014 (तीस्ता अतुल सीतलवाड़)	गुजरात राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में बॉम्बे उच्च न्यायालय	उच्च न्यायालय ने चार सप्ताह के लिए पारगमन जमानत प्रदान की और आवेदक को उक्त राहत के लिए गुजरात में उपयुक्त न्यायालय के समक्ष जाने की अनुमति दी।
11. गेम्सक्राफ्ट टेक्नोलॉजीज बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2019 एस. सी. सी. ऑनलाइन कार 520 (गेम्सक्राफ्ट टेक्नोलॉजीज)	महाराष्ट्र राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में कर्नाटक उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने माना कि यह कानून का एक सुव्यवस्थित प्रस्ताव है कि हालांकि कथित अपराध उक्त न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं हुआ था, लेकिन वह जमानत दे सकता है, हालांकि उसका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। उच्च न्यायालय ने आवेदन को स्वीकार करते हुए निर्देश दिया कि यदि उन्हें गिरफ्तार किया जाता है तो

		उन्हें तुरंत रिहा किया जाना चाहिए, इस शर्त के साथ कि आवेदक 15 दिनों के भीतर या संबंधित पुलिस द्वारा उनकी गिरफ्तारी की तारीख से 15 दिनों के भीतर, जो भी पहले हो, क्षेत्राधिकार न्यायालय के समक्ष पेश होगा।
12. सूर्य प्रताप सिंह बनाम कर्नाटक राज्य, 2019 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 9533 (सूर्य प्रताप सिंह)	कर्नाटक राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में दिल्ली उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने आवेदक को संबंधित न्यायालय के समक्ष उचित आवेदन करने के लिए दो सप्ताह का समय दिया। दो सप्ताह के लिए सुरक्षा प्रदान की गई थी।

ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 566 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 15 एस. सी. आर.

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
13. निकिता जैकब बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन बम 13919 (निकिता जैकब)	नई दिल्ली में पंजीकृत अपराध के संबंध में बॉम्बे उच्च न्यायालय।	यह तर्क दिया गया कि स्वतंत्रता की रक्षा करने और तत्काल गिरफ्तारी से बचने के लिए अस्थायी राहत की अनिवार्यता पर अदालत के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर कथित रूप से किए गए अपराध के लिए अंतरिम जमानत देने पर भरोसा किया जा सकता है।
14. अजय अग्रवाल बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य, 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन	महाराष्ट्र राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में इलाहाबाद उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने कहा कि पारगमन जमानत एक निश्चित अवधि के लिए गिरफ्तारी से सुरक्षा है जैसा कि

ऑल 689 (अजय अग्रवाल)		इस तरह की पारगमन जमानत देने वाले न्यायालय द्वारा दी गई है। इसलिए, न्यायालय ने अभियुक्त को छह सप्ताह की अवधि के लिए सुरक्षा प्रदान की ताकि वह उचित राहत पाने के लिए सक्षम न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में सक्षम हो सके।
15. अमिता गर्ग बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन ऑल 463 (अमिता गर्ग)	राजस्थान राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में इलाहाबाद उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने कहा कि ऐसा कोई कानून या कानून नहीं है जो निश्चित या विशिष्ट शर्तों में "पारगमन या अग्रिम जमानत" की अवहेलना करता हो। उक्त अदालत ने समझाया कि पारगमन अग्रिम जमानत आरोपी की नजरबंदी से पहले होती है और गिरफ्तारी के समय तुरंत प्रभावी होती है। पारगमन जमानत एक निश्चित अवधि के लिए गिरफ्तारी से सुरक्षा है जैसा कि इस तरह की पारगमन जमानत देने वाले न्यायालय द्वारा निर्देश दिया गया है। इसलिए, जब किसी अभियुक्त को न्यायालय के आदेश के अनुसार गिरफ्तार किया जाता है और जबकि अभियुक्त को उपरोक्त मामले में अधिकार क्षेत्र वाले किसी अन्य सक्षम न्यायालय में मुकदमा चलाने की

		आवश्यकता होती है, तो अभियुक्त को अस्थायी अवधि के लिए जमानत दी जाती है, यानी अभियुक्त को उस स्थान से उस सक्षम न्यायालय तक पहुंचने के लिए आवश्यक समय अवधि जिसमें उसे गिरफ्तार किया जाता है। नियमित न्यायालय इस तरह की अग्रिम जमानत पर अपने गुण-दोष के आधार पर विचार करेगा और इस तरह की अग्रिम जमानत याचिका पर फैसला करेगा। इसलिए, यह आसानी से कहा जा सकता है कि पारगमन जमानत एक अस्थायी राहत है जो एक आरोपी को एक निश्चित अवधि के लिए मिलती है।
--	--	--

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 568

केस का नाम	उच्च न्यायालय	परिणाम और तर्क
		समय की। उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि उच्च न्यायालय की ओर से पारगमन अग्रिम जमानत देने में कोई बाधा नहीं है ताकि आवेदक उच्च न्यायालय सहित उन न्यायालयों से संपर्क कर सकें जिनके अधिकार क्षेत्र में अपराध

		कथित रूप से किया गया है और मामला दर्ज किया गया है।
16. मंदा सुरेश पारुलेकर बनाम गोवा राज्य, 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन बम 1568 (मंदा सुरेश पारुलेकर)	गोवा राज्य में पंजीकृत अपराध के संबंध में बॉम्बे उच्च न्यायालय।	उच्च न्यायालय ने गोवा के तारदेव में दर्ज एक प्राथमिकी के संबंध में पारगमन अग्रिम जमानत प्रदान की। मामले के गुण-दोष पर निर्णय लिए बिना, मामले के तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार करने पर, चार सप्ताह की अवधि के लिए संरक्षण प्रदान किया गया था ताकि आवेदक उचित राहत के लिए संबंधित न्यायालय का रुख कर सकें।

18. उपरोक्त तालिका उस समृद्ध न्यायशास्त्रीय चर्चा का प्रमाण है जो 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' अभिव्यक्ति के संबंध में सीमित विधायी मार्गदर्शन से उत्पन्न हुई है।' उपरोक्त मामले के कानून का विश्लेषण इस प्रकार है:

ए। सैयद जफरुल हसन के मामले में पटना उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के स्पष्ट अर्थ पर जोर देते हुए कहा कि 'उच्च न्यायालय' या 'सत्र न्यायालय' का अर्थ 'कोई उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' नहीं हो सकता है। इसलिए, इसने माना कि सीआरपीसी की धारा 438 के तहत निर्देश के लिए आवेदन पटना उच्च न्यायालय की पटना पीठ में बनाए रखने योग्य नहीं था क्योंकि प्राथमिकी झिंकपानी पुलिस स्टेशन में दर्ज की गई थी जो सिंहभूम जिले में आती है। इस प्रकार यह मामला पूरी तरह से रांची में पटना उच्च न्यायालय की पीठ के अधिकार क्षेत्र में आया। उच्च न्यायालय ने इस सिद्धांत पर जोर दिया कि एक आपराधिक न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है न कि व्यक्तिगत अपराध का, रघुबंस दुबे के अनुसार। इसलिए, उच्च न्यायालय ने व्यावहारिक विषम संस्कृतियों पर जोर दिया कि यदि आपराधिक न्यायालय का अधिकार क्षेत्र 'बंद करने वालों की संदिग्ध या टालमटोल वाली गतिविधियों' द्वारा निर्धारित किया जाता है, तो 'न्यायिक' होगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

अदालतों की समिति के बीच अराजकता और एक अंतर्निहित टकराव।' उच्च न्यायालय ने आगाह किया कि यदि अग्रिम जमानत के लिए आवेदन उच्च न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर

बनाए रखने योग्य है, तो एक भगोड़ा अपराधी अदालत से अदालत में जा सकता है और यदि वह एक अधिकार क्षेत्र में विफल रहता है तो दूसरे में तब तक जा सकता है जब तक कि वह अंतिम में राहत प्राप्त नहीं कर लेता।'

ख. साधना चंद्र कोलाय में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने भरोसा किया

संविधान के अनुच्छेद 214 में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य के लिए एक उच्च न्यायालय होगा और स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सत्र न्यायाधीश को सत्र-मंडल के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं से परे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति या अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं है।

ग. हनी प्रीत इंसा के तथ्य इस हद तक विशिष्ट हैं कि अंतरिम संरक्षण की राहत से इनकार कर दिया गया था क्योंकि आवेदक फरार था और उसने जांच में शामिल होने से स्पष्ट रूप से इनकार कर दिया था।डी। इस मोड़ पर यह ध्यान दिया जा सकता है कि उपरोक्त दृष्टिकोण का न्यायमूर्ति वी. एस. मल्लिमथ समिति की आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधारों पर रिपोर्ट द्वारा समर्थन किया गया था।धारा 73, पृष्ठ 121 में समिति ने प्रस्ताव दिया था कि अग्रिम जमानत के संबंध में प्रावधान को दो शर्तों के अधीन रखा जा सकता है: कि न्यायालय लोक अभियोजक को सुनेगा और अग्रिम जमानत की याचिका की सुनवाई केवल सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए।

ई. निर्णयों का एक अन्य समूह, जैसे कि सूर्य प्रताप सिंह में दिल्ली उच्च न्यायालय, अजय अग्रवाल में इलाहाबाद उच्च न्यायालय, अमिता गर्ग, तीस्ता अतुल सीतलवाड़ में बॉम्बे उच्च न्यायालय,

निकिता जैकब और मंदा सुरेश पारुलेकर

पारगमन अग्रिम जमानत दृष्टिकोण।इन मामलों में, उच्च न्यायालय ने पारगमन जमानत प्रदान की और फैसला सुनाया कि उनके अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं से परे गिरफ्तारी से सुरक्षा प्रदान करना संक्रमणकालीन अवधि के लिए जमानत पर विचार करने की सीमा तक सीमित है। दूसरे शब्दों में, उच्च न्यायालयों ने अपने-अपने निर्णय में आपराधिक न्याय के प्रशासन की योजना और अग्रिम जमानत के प्रावधान को संयुक्त अर्थों में पढ़ा है, जिससे 569

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 570

अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत की राहत को एक निश्चित अंतरिम अवधि तक सीमित करना।

च. निर्णयों की एक अन्य पंक्ति, अर्थात् प्रीतम सिंह में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा; सी. एल. में केरल उच्च न्यायालय। मैथ्यू; बॉम्बे हाई

एन. के. नायर में न्यायालय; कलकत्ता उच्च न्यायालय पुनः:बिनोद रंजन

सिन्हा और कर्नाटक उच्च न्यायालय ने एल. आर. नायडू और गेमक्राफ्ट टेक्नोलॉजीज में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 में 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' अभिव्यक्ति को आपराधिक प्रक्रिया की सामान्य योजना से अलग और असंगत के रूप में पढ़ा है, जिससे किसी विशेष स्थान

पर गिरफ्तारी की आशंका को दूर करने के लिए गिरफ्तारी से संरक्षण देने के पक्ष में निर्णय लिया गया है, चाहे आपराधिक अपराध का संज्ञान लेने के लिए क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र कुछ भी हो। व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करने की संवैधानिक अनिवार्यता पर जोर दिया गया और यह ध्यान दिया गया कि एक व्यक्ति उस स्थान के अलावा किसी अन्य स्थान पर गिरफ्तारी कर सकता है जिसमें अधिकार क्षेत्र के भीतर एक कथित अपराध किया गया है। उच्च न्यायालयों ने अपने-अपने निर्णयों में 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' अभिव्यक्ति की विधायी योग्यता की कमी को इंगित करते हुए कहा कि इसका विस्तार किसी भी उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय तक है जिसके अधिकार क्षेत्र में गिरफ्तारी किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा की जाती है जिसके खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की गई है।

विदेशों में कानून की स्थिति:

19. मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 का अनुच्छेद 9 यह स्थापित करता है कि "किसी को भी मनमाने ढंग से गिरफ्तारी, हिरासत या निर्वासन के अधीन नहीं किया जाएगा।" संयुक्त राष्ट्र के नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा, 1966 का अनुच्छेद 10 यह स्थापित करता है कि "अपनी स्वतंत्रता से वंचित सभी व्यक्तियों के साथ मानवता और मानव व्यक्ति की अंतर्निहित गरिमा के सम्मान के साथ व्यवहार किया जाएगा।" अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों में ये प्रावधान स्वतंत्रता के मनमाने और अमानवीय वंचित होने की वास्तविकता और कानूनी संसाधनों और संवैधानिक गारंटी से लाभान्वित होने से वंचित लोगों की अक्षमता के खिलाफ एक आवश्यक सुरक्षा हैं जो वे किसी भी न्यायिक प्रणाली में कानून द्वारा आवश्यक अपनी रक्षा के संचालन के लिए और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के अनुप्रयोग के लिए हकदार हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

20. आपराधिक प्रक्रिया के कानून पर तुलनात्मक कानूनी अध्ययन भारत को गिरफ्तारी-पूर्व जमानत के प्रावधान के संबंध में एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करता है। यह विचार करना उपयोगी होगा कि अन्य क्षेत्राधिकारों ने गिरफ्तारी-पूर्व जमानत के मुद्दे से कैसे निपटा है:

(क) संभवतः, संयुक्त राज्य अमेरिका में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत बांड के लिए आवेदन का एकमात्र ज्ञात मामला पुनः है: स्टर्मन, **1984.604 F. सप।278**. (एफ. ई. डिवाइन (1990) अग्रिम जमानत: एक भारतीय नागरिक स्वतंत्रता नवाचार, अंतर्राष्ट्रीय

जर्नल ऑफ कम्पेरेटिव एंड एप्लाइड क्रिमिनल जस्टिस, **14:1-2,**

107-114). ओहायो के उत्तरी जिले के लिए अमेरिकी जिला न्यायालय ने माना कि आवेदक का प्रस्ताव गिरफ्तारी की शर्मिंदगी से खुद को बचाने के लिए किया गया था। प्रस्ताव को अपरिपक्व बताते हुए, मुख्य जिला न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि "जमानत बांड की स्थापना मुकदमे में आरोपी की उपस्थिति का बीमा करने के लिए है; इसे गिरफ्तारी से बचने के साधन के रूप में नहीं बनाया गया है।"

(ख) यूनाइटेड किंगडम में, गिरफ्तारी के सामान्य कानून को आपराधिक कानून अधिनियम, 1967 की धारा 2 में संहिताबद्ध किया गया था। धारा 2 के मुख्य पहलू यह हैं कि गिरफ्तारी को वैध बनाने के लिए, अपराध वह होना चाहिए जिसमें पांच साल के कारावास (एक "गिरफ्तारी योग्य अपराध") का जुर्माना हो और कम से कम, उचित आधारों पर संदेह होना चाहिए कि गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति या तो अपराध कर रहा है, या अपराध करने वाला है। इसे सबूतों के विनाश, गवाहों के साथ हस्तक्षेप या चेतावनी देने वाले सहयोगियों को रोकने के लिए एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है जिन्हें अभी तक गिरफ्तार नहीं किया गया है। जब संदेह करने का कारण होता है कि एक ऑफ एन्से को दोहराया जा सकता है, विशेष रूप से हालांकि विशेष रूप से हिंसक ऑफ एन्से के मामले में नहीं, तो इसका उपयोग इस तरह की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए किया जा सकता है। (ग) आपराधिक प्रक्रिया पर यूनाइटेड किंगडम की रॉयल कमीशन रिपोर्ट (फिलिप्स कमीशन) (1981)-द्वारा प्रासंगिक रूप से उद्धृत

जोगिंदर कुमार बनाम यू. पी. राज्य, (1994) 4 एस. सी. सी. में यह न्यायालय

260, पैरा 17-19-उन परिस्थितियों को प्रतिबंधित करने का प्रस्ताव किया गया है जिनमें पुलिस किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से वंचित करने के लिए वारंट के साथ गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग कर सकती है, जिसमें उन्हें अपराध करने से रोकने, अपराध की जांच करने के अपने कर्तव्यों का पालन करने में सक्षम बनाना वास्तव में आवश्यक होगा और 571

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 572

संदिग्धों को न्यायालयों के समक्ष पेश करना और गिरफ्तारी की मौजूदा वैधानिक शक्तियों को सरल, स्पष्ट और तर्कसंगत बनाना, उन शक्तियों के उपयोग के लिए वर्तमान तर्क को स्वीकार करना। इसमें इस प्रकार कहा गया है:

“गिरफ्तारी की शक्ति को सीमित करने के प्रयास में, हमारा इरादा पुलिस को अपराध का पता लगाने और रोकने के अपने कार्यों को पूरा करने से रोकने का नहीं है। लेकिन हम उस प्रथा को बदलने की कोशिश करते हैं जिसके तहत एक अनिवार्य क्रम जो एक उचित संदेह के उत्पन्न होने पर होगा वह गिरफ्तारी है, जिसके बाद स्टेशन पर ले जाया जाता है, अक्सर तलाशी ली जाती है, मुद्रित किया जाता है और फोटो खींचा जाता है। हमें प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पुलिस शिकायत बोर्ड के दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं, जो उनकी त्रैवार्षिक रिपोर्ट में व्यक्त किया गया है, कि पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी और हिरासत की प्रक्रिया में इतने शामिल हैं कि वे कभी-कभी उन लोगों में से कुछ द्वारा महसूस किए गए खतरे और निराशा की भावना को समझने में विफल रहते हैं जो इस तरह के व्यवहार के लिए पर्याप्त हैं। गिरफ्तारी संदिग्ध के life. That व्यवधान के लिए एक बड़े व्यवधान का प्रतिनिधित्व करती है, हमारे विचार में, यदि उसे निम्नलिखित में से एक या अधिक कारणों से स्टेशन ले जाना आवश्यक नहीं है तो इसे उचित नहीं ठहराया जा सकता है: उसका नाम और पता निकालना; अपराध की निरंतरता या पुनरावृत्ति को रोकना; व्यक्तियों या संपत्ति की रक्षा करना; उस अपराध के संबंध में साक्ष्य को संरक्षित करना; उचित संदेह को दूर करना या इसे प्रथम दृष्टया मामले में बदलना।” (पैरा 3.75)

शाही आयोग ने मनमाने ढंग से गिरफ्तारी की संभावना को कम करने के लिए आवश्यकता सिद्धांत को रेखांकित किया, जिससे पुलिस अधिकारी को संदिग्ध को उसकी हिरासत में लेने के लिए यह पूछताछ करने की आवश्यकता होती है कि क्या गिरफ्तार व्यक्ति को निम्नलिखित मानदंडों के आधार पर पुलिस स्टेशन में रखना आवश्यक होगा:

- ((i) व्यक्ति की अपनी पहचान बताने की अनिच्छा ताकि उसे समन भेजा जा सके।
- ((ii) उस ऑफ-एन्से की निरंतरता या पुनरावृत्ति को रोकने की आवश्यकता;
- ((ग) गिरफ्तार व्यक्ति को स्वयं, या अन्य व्यक्तियों या संपत्ति की रक्षा करने की आवश्यकता;

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

((iv) संदिग्ध से पूछताछ करके उसके साक्ष्य को सुरक्षित या संरक्षित करने या उससे संबंधित साक्ष्य प्राप्त करने की आवश्यकता; और

(v) व्यक्ति के अपने खिलाफ लगाए गए किसी भी आरोप का जवाब देने के लिए अदालत में पेश होने में विफल रहने की संभावना।

(घ) रेजिना बनाम में रानी की पीठ। गृह विभाग के राज्य सचिव, एक्स पार्टी लीच, (1994) क्यू. बी. 198 ने कहा कि

यह मौलिक महत्व का सिद्धांत था कि प्रत्येक नागरिक को अदालत में निर्बाध पहुंच का अधिकार था, और उसके संबंध में सलाह और सहायता प्राप्त करने के उद्देश्य से एक वकील का अधिकार था।

(ई) केन्या में, जबकि अग्रिम जमानत पर कोई विशिष्ट सी प्रावधान नहीं हैं, ये इसके बजाय अधिकार विधेयक के तहत संवैधानिक प्रावधानों में निहित हैं। केन्या के संविधान, 2010 में निम्नलिखित प्रावधान हैं: (i) अनुच्छेद 49 (1) (एच) के तहत गिरफ्तार व्यक्ति की जमानत

((ii) अधिकार विधेयक के उल्लंघन के लिए अनुच्छेद 23 (3) के तहत उचित राहत।

इसलिए, जहां भी उपचार पर विचार किया गया है, अदालतों ने केन्याई संविधान के अनुच्छेद 23 और 165 (3) के तहत अधिकारों के उल्लंघन या खतरे के उल्लंघन को रोकने की मांग करने वाले आवेदन पर लागू सीमा को लागू किया है। (च) कोरोलिन कुथी करंजा बनाम केन्या का उच्च न्यायालय।

निदेशक लोक अभियोजन, (2021) ई. के. एल. आर. व्यापक रूप से

सी. आर. पी. सी. की धारा 438 का उल्लेख करते हुए कहा कि भारत के संवैधानिक न्यायालयों ने व्यापक रूप से अग्रिम जमानत के मौलिक पहलुओं को बहुत महत्वपूर्ण माना है और किसी व्यक्ति

के जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार के लिए लंगर डाला है। उच्च न्यायालय ने केन्या के लोगों के अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं की रक्षा के लिए संविधान की लंबाई और चौड़ाई तक जाने के अपने संवैधानिक कर्तव्य को भी दृढ़ता से दोहराया, लेकिन इसने राज्य के अन्य अंगों को उनके संवैधानिक जनादेश का पालन करने से रोकने के अपने दायित्व के प्रति जीवित रहने की आवश्यकता पर जोर दिया। तदनुसार, उच्च न्यायालय ने अग्रिम जमानत 573 दी।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 574

इस आधार पर कि उसमें आवेदक को अतीत में गिरफ्तार किया गया था और वह उस आरोप के लिए मुचलके पर हिरासत से बाहर था जो उस आरोप के समान था जिसके लिए उसने गिरफ्तारी की आशंका जताई थी।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता और न्याय तक पहुंच:

जबकि हमने इस मामले में उठाए गए प्रासंगिक प्रश्न/मुद्दे पर इस न्यायालय के साथ-साथ देश भर के विभिन्न उच्च न्यायालयों के प्रमुख निर्णयों का विश्लेषण किया है, हमें इसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता और न्याय तक पहुंच के दृष्टिकोण से भी देखना चाहिए। भारत के संविधान का अनुच्छेद 39 ए समान न्याय और मुफ्त कानूनी सहायता से संबंधित है, जिसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का एक विशिष्ट रूप माना जा सकता है, जो जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार से संबंधित है। तत्काल संदर्भ के लिए, अनुच्छेद 39 ए को निम्नानुसार निकाला गया है:

“ 39 उ. समान न्याय और मुफ्त कानूनी सहायता।- राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि

कानूनी प्रणाली का संचालन समान अवसर के आधार पर न्याय को बढ़ावा देता है, और विशेष रूप से, उचित विधान या योजनाओं या किसी अन्य तरीके से मुफ्त कानूनी सहायता प्रदान करेगा, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी भी नागरिक को आर्थिक या अन्य अक्षमताओं के कारण न्याय प्राप्त करने के अवसरों से वंचित न किया जाए।”

21. अनीता कुशवाहा बनाम पुष्प सुदान, (2016) 8 एस. सी. सी. 509 में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार के भीतर न्याय तक पहुंच को शामिल किया और निम्नानुसार टिप्पणी की:

“31. इस तथ्य को देखते हुए कि ऊपर उल्लिखित घोषणाओं ने जीवन के अधिकार के लिए आनुषंगिक और/या अभिन्न माने जाने वाले अधिकारों के एक व्यापक स्पेक्ट्रम पर संविधान के अनुच्छेद 21 में दिखाई देने वाले "जीवन" शब्द की व्याख्या और समझ की है, कोई वास्तविक कारण नहीं है कि न्याय तक पहुंच को उक्त अधिकारों के वर्ग और श्रेणी से बाहर माना जाना चाहिए, जो पहले से ही भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के एक हिस्से के रूप में मान्यता प्राप्त है। यदि "जीवन" का तात्पर्य न केवल भौतिक अर्थों में जीवन है, बल्कि अधिकारों का एक समूह है जो जीवन को जीने लायक बनाता है, तो यह मानने के लिए कोई कानूनी या अन्य आधार नहीं है कि "न्याय तक पहुंच" से इनकार करने से मानव जीवन की गुणवत्ता प्रभावित नहीं होगी ताकि अनुच्छेद

21 के तहत गारंटीकृत जीवन के अधिकार के दायरे से न्याय तक पहुँच प्राप्त की जा सके। इसलिए हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि न्याय तक पहुंच वास्तव में जीवन के अधिकार की गारंटी का एक पहलू है

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत हमें केवल यह जोड़ने की आवश्यकता है कि न्याय तक पहुँच संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत गारंटीकृत अधिकार का पहलू भी हो सकता है, जो न केवल नागरिकों बल्कि गैर-नागरिकों को भी कानून के समक्ष समानता और कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी देता है। हम ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि कानून के समक्ष समानता और कानूनों का समान संरक्षण कानून को लागू करने वाली कार्यकारी कार्यवाही के दायरे में इसके अनुप्रयोग तक सीमित नहीं है। यह न्यायालयों और न्यायाधिकरण और न्यायनिर्णायक मंचों के समक्ष कार्यवाही के संबंध में उतना ही उपलब्ध है जहां कानून लागू किया जाता है और न्याय प्रशासित किया जाता है। अधिकारों और दायित्वों के निर्धारण के लिए प्रदान किए गए न्यायालयों या किसी अन्य न्यायिक तंत्र तक पहुँचने में नागरिक की असमर्थता के परिणामस्वरूप कानून के समक्ष समानता के साथ-साथ कानूनों के समान संरक्षण दोनों के संबंध में अनुच्छेद 14 में निहित गारंटी से इनकार करना बाध्य है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि किसी भी न्यायिक तंत्र की अनुपस्थिति या इस तरह के तंत्र की अपर्याप्तता, कानूनों के समक्ष समानता के अपने अधिकार को लागू करने और कानूनों के समान संरक्षण की मांग करने वालों को निवारण की मांग करने से रोकने के लिए बाध्य है और इस तरह कानूनों के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी को नकारती है और इसे केवल एक चिढ़ाने वाले भ्रम में बदल देती है। संविधान के अनुच्छेद 21 के अलावा, न्याय तक पहुँच को अनुच्छेद 14 में निहित गारंटी का भी हिस्सा कहा जा सकता है।”

संविधान पीठ ने न्याय तक पहुँच के चार पहलुओं को इस प्रकार गिना है: “33. चार मुख्य पहलू जो, हमारी राय में, न्याय तक पहुँच का सार हैं, वे हैं:

(i) राज्य को एक प्रभावी न्यायिक तंत्र प्रदान करना चाहिए; (ii) इस प्रकार प्रदान किया गया तंत्र दूरी के संदर्भ में यथोचित रूप से सुलभ होना चाहिए;

((ग) न्यायनिर्णयन की प्रक्रिया त्वरित होनी चाहिए; और

((iv) न्यायनिर्णायक प्रक्रिया में वादी की पहुंच उचित होनी चाहिए।”

22. इसलिए, इस न्यायालय ने एक नागरिक के लिए अपनी शिकायत का आंदोलन करने और मौलिक अधिकार के स्तर तक अपने अधिकार के उल्लंघन के रूप में निर्णय लेने की मांग करने के लिए एक न्यायसंगत न्यायनिर्णायक मंच के प्रावधान को बढ़ा दिया है। न्यायनिर्णायक मंच को न केवल अपने कामकाज में प्रभावी माना जाता है 575

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 576

और अपने दृष्टिकोण में न्यायपूर्ण, निष्पक्ष और उद्देश्यपूर्ण, लेकिन इसे नीचे दिए गए अवलोकन द्वारा सुविधाजनक रूप से सुलभ और उचित भी होना चाहिए:

“35. इस प्रकार प्रदान किया गया मंच/तंत्र, न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के पदानुक्रम को ध्यान में रखते हुए, न्याय तक पहुँच के लिए दूरी के संदर्भ में यथोचित रूप से सुलभ होना चाहिए क्योंकि इतना कुछ वादी की अपनी शिकायत को अदालत/न्यायाधिकरण/न्यायालय/सक्षम प्राधिकारी के समक्ष प्रभावी रूप से रखने की क्षमता पर निर्भर करता है।(डी. के. देखें।

बसु बनाम स्टेट ऑफ़ डब्ल्यू. बी. [डी. के. बसु बनाम स्टेट ऑफ़ डब्ल्यू. बी., (2015) 8 एस. सी. सी. 744

:(2015) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 824] ”

23. इस बात पर भी जोर दिया गया कि न्याय तक पहुँच, इसलिए, किसी भी महत्वपूर्ण कार्य और उपयोगिता का एक संवैधानिक मूल्य तभी होगा जब नागरिक को न्याय का वितरण तेजी से हो, अन्यथा, न्याय तक पहुँच का अधिकार नागरिक के लिए कोई उपयोग या प्रेरणा के खोखले नारे से ज्यादा कुछ नहीं है। यह निम्नानुसार आयोजित किया गया था:

“38. न्याय तक पहुँच फिर से एक भ्रम से अधिक कुछ नहीं होगा यदि प्रदान किया गया न्यायनिर्णायक तंत्र इतना महंगा है कि एक विवादित व्यक्ति को इसका सहारा लेने से रोका जा सके। संविधान का अनुच्छेद 39-ए जरूरतमंद वादियों को कानूनी सहायता प्रदान करने के एक प्रशंसनीय उद्देश्य को बढ़ावा देता है और राज्य को समाज के कम भाग्यशाली वर्गों के लिए न्याय तक पहुँच को उचित बनाने के लिए बाध्य करता है।”

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा **438**: व्याख्या

24. यहाँ उठाए गए बिंदुओं पर विचार करने का उत्तर उस निर्माण से सामने आएगा जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 में 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' अभिव्यक्ति के लिए निर्धारित है। हमारे समक्ष यह प्रस्तुत किया गया था कि उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय के समक्ष 'द' अनुच्छेद के उपयोग का अर्थ यह होना चाहिए कि उच्च न्यायालय और वह सत्र न्यायालय जो उस क्षेत्र पर क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है जहाँ एक अपराध किया गया है।

25. यह वास्तव में वैधानिक व्याख्या का एक तुच्छ नियम है कि दंडात्मक कानूनों का कड़ाई से अर्थ लगाया जाना चाहिए। जब कृत्यों को दंडनीय बनाया जाना है और जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति के नुकसान या हानि के साथ दौरा किया जाना है, तो यह तर्क दिया जा सकता है कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए स्पष्ट और सटीक अवज्ञा की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, एक व्याख्या को अपनाने के लिए उचित ध्यान रखा जाना चाहिए जो

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

पाठ्य व्याख्या को प्रासंगिक से मेल खाता है। इस संबंध में निम्नलिखित प्रासंगिक पहलुओं पर ध्यान दिया जा सकता है:

ए। सी. आर. पी. सी. स्पष्ट रूप से 'स्थानीय सीमा' और 'स्थानीय अधिकार क्षेत्र' को परिभाषित करता है जिसके भीतर मजिस्ट्रेट अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर सकता है।

बी। भले ही उच्च न्यायालय सी. आर. पी. सी. की अवहेलना करता है, लेकिन कोई भी प्रावधान स्पष्ट रूप से इसके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की अवहेलना नहीं करता है जिसे भारत के संविधान से देखा जाना चाहिए।

ग. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 (1) (iv) गिरफ्तारी की आशंका रखने वाले व्यक्तियों के अपमान को रोकने के लिए विधायी इरादे को स्पष्ट करती है, विशेष रूप से राजनीति से प्रेरित या दुर्भावनापूर्ण अभियोजन या झूठे मामलों में।

घ. सी. आर. पी. सी. की धारा 438 जिस शरारत को दूर करना चाहती है, वह गलत गिरफ्तारी की आशंका है।

26. इसलिए, हमें 'यह विश्वास करने का कारण कि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है' अभिव्यक्ति को पर्याप्त आयाम प्रदान करना चाहिए, और उन स्थितियों को देखना चाहिए जिनमें शब्दों का उपयोग किया गया है और जिन परिस्थितियों में यह तय करने के लिए कानून पारित किया गया है कि क्या उपयोग किए गए शब्दों के पीछे कुछ निहित है जो ऐसे शब्दों के शाब्दिक अर्थ को नियंत्रित करता है। उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के क्षेत्रीय सीमा के बाहर किए गए अपराध के लिए अंतरिम अग्रिम जमानत देने के लिए सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में एक पूर्ण प्रतिबंध को जन्म देने वाली व्याख्या वास्तविक आवेदकों के लिए एक विसंगत और अन्यायपूर्ण परिणाम का कारण बन सकती है जो गलत, दुर्भावनापूर्ण या राजनीतिक रूप से प्रेरित अभियोजन का शिकार हो सकते हैं। 27. इसके अलावा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और न्याय तक पहुंच के मौलिक अधिकार, जिन्हें संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त है और वरिष्ठ न्यायालयों के साथ अधिकार क्षेत्र की उपस्थिति के माध्यम से सांविधिक रूप से संरक्षित किया गया है, को इस तरह की प्रतिबंधात्मक व्याख्या के माध्यम से कम किया जाएगा। एक कानून का अर्थ लगाते समय, संवैधानिक न्यायालय एक प्रासंगिक रूप से संवेदनशील निर्माण प्रदान करने के लिए बाध्य हैं जो मूल संवैधानिक मूल्यों को संरक्षित और आगे बढ़ाता है।

28. इस संबंध में भरोसा इस न्यायालय के आदेश पर रखा जा सकता है।

केंद्रीय अंतर्देशीय जल परिवहन निगम बनाम ब्रोजो नाथ गांगुली, (1986) 3 एससीसी 156:

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 578

“इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सार्वजनिक नीति को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत उचित अवसर पर विस्तार या संशोधन करने में सक्षम होने चाहिए और होने चाहिए। जिन प्रथाओं को एक समय में पूरी तरह से सामान्य माना जाता था, वे आज सार्वजनिक विवेक के लिए अप्रिय और दमनकारी हो गए हैं। यदि सार्वजनिक नीति का कोई प्रमुख नहीं है जो किसी मामले को शामिल करता है, तो न्यायालय को सार्वजनिक विवेक के अनुरूप और सार्वजनिक भलाई और सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए ऐसी प्रथा को जनता के खिलाफ घोषित करना चाहिए।

नीति। सबसे बढ़कर, किसी भी मामले का निर्णय लेने में जो प्राधिकरण द्वारा कवर नहीं किया जा सकता है, हमारे न्यायालयों के सामने संविधान की प्रस्तावना का प्रकाश होता है। मिसाल के अभाव में, न्यायालय को हमेशा उस प्रकाश और हमारे संविधान में निहित मौलिक अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्निहित सिद्धांतों द्वारा निर्देशित किया जा सकता है।”

(हम पर जोर देते हैं) 29। हम इस बात को ध्यान में रखते हैं कि धारा 438 पर इस न्यायालय का न्यायशास्त्र

सी. आर. पी. सी., विशेष रूप से गुरबख्श सिंह सिबिया और सुशीला अग्रवाल में,

अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक प्रक्रियात्मक राहत प्रदान करने के इरादे को इंगित करने के लिए संसद की खामोशी की व्याख्या करते हुए न्यायिक विवेक के विवेकपूर्ण अभ्यास की रेखा को आगे बढ़ाया है। जबकि गुरबख्श सिंह सिबिया की संविधान पीठ ने अग्रिम जमानत की राहत देने पर प्रक्रियात्मक और ठोस प्रतिबंधों के खिलाफ फैसला सुनाया, सुशीला अग्रवाल की संविधान पीठ ने कहा कि अग्रिम जमानत की अवधि सीमित नहीं हो सकती है, और मुकदमे के अंत तक बढ़ाई जा सकती है। गुरबख्श सिंह सिबिया मामले में संविधान पीठ के फैसले में पैरा 13 में इस बात पर जोर दिया गया है कि 'उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय, जिन्हें अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया गया है, को अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करते हुए जमानत देने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए, यदि वे मामले के विशेष तथ्यों और परिस्थितियों और ऐसी शर्तों पर ऐसा करने के लिए ऐसा नहीं मानते हैं जो मामला वारंट कर सकता है।'

30. मैक्सवेल ने कानूनों की व्याख्या (10 संस्करण) पर अपने ग्रंथ में, पृष्ठ 284 में कहा है कि "समग्र रूप से आधुनिक निर्णयों की प्रवृत्ति सख्त और लाभकारी संरचना के बीच के अंतर को भौतिक रूप से कम करना है।" यह इस प्रकार है कि सी. आर. पी. सी. जैसे आपराधिक कानूनों की व्याख्या विधायिका के उद्देश्य और इरादे के तर्कसंगत संबंध में की जाती है। न्यायिक दिमाग में जो बात उठनी चाहिए वह यह है कि सभी कानूनों की व्याख्या होनी चाहिए

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

आपराधिक न्याय के निष्पक्ष और प्रभावी प्रशासन के अधीन व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए अनुकूल।

31. अग्रिम जमानत जैसा उपाय नागरिकों को अलग-अलग धार्मिक जीवन की परिस्थितियों में पीड़ित होने से सुरक्षित करता है-और इस तरह के अलग-अलग संप्रदाय विकसित होते रहेंगे क्योंकि हमारा सामूहिक जीवन और कानूनी प्रणालियाँ अधिक जटिल हो जाती हैं। हम इसे गिरफ्तारी की आशंका से उत्पन्न अधिकार क्षेत्र के प्रयोग और "अपराध के आयोग और संज्ञान" के परिणामस्वरूप प्रदत्त अधिकार क्षेत्र के बीच अंतर करने के लिए नहीं मानते हैं। यदि संसद का इरादा था कि 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' शब्द का अर्थ केवल वह न्यायालय है जो किसी अपराध का संज्ञान लेता है, तो संसद ने इसे बहुत स्पष्ट कर दिया होगा। 'उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय' अभिव्यक्ति के किसी भी योग्यता उल्लेख को हटाना इस तरह से बनाया जाना चाहिए जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा के संवैधानिक आदर्श को आगे बढ़ाता है। यह अग्रिम जमानत देने में सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय को एक व्यापक अधिकार क्षेत्र सौंपने में भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बढ़ावा देने के लिए होगा, बजाय इसके कि अग्रिम जमानत देने के मामले में अधिकार क्षेत्र के प्रयोग का पुनर्गठन करके इसे बंद कर दिया जाए।

32. डॉ. मनीष सिंघवी द्वारा दी गई दलीलों के संदर्भ में कि अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत देने की बेलगाम शक्ति सीआरपीसी की धारा 438 में अलग-अलग राज्य संशोधनों के कारण विसंगतियां पैदा करेगी, हम ध्यान देते हैं कि उत्तर प्रदेश राज्य में अग्रिम जमानत के प्रावधान के आवेदन को दंड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, 1976 के अधिनियमन द्वारा हटा दिया गया था। उत्तर प्रदेश राज्य विधानमंडल ने दंड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, 2018 के अधिनियमन के माध्यम से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 को 'इसके पुनरुद्धार की निरंतर मांग', उच्च न्यायालयों के समक्ष रिट याचिकाओं और 2009 में अपनी तीसरी रिपोर्ट में उत्तर प्रदेश राज्य विधि आयोग की सिफारिशों के अनुसार लागू किया। हम यह भी ध्यान देते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, 2022 अग्रिम जमानत के प्रावधान को लागू नहीं करता है (क) (i) गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम, 1967; (ii) मादक पदार्थ और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985; (iii) आधिकारिक गोपनीयता अधिनियम, 1923; (iv) उत्तर प्रदेश गैंगस्टर और असामाजिक गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम, 1986; (v)

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 580

579

यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012; (बी) उन अपराधों के लिए जिनमें मौत की सजा दी जा सकती है; (सी) भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376, 376-ए, 376-एबी, 376-बी, 376-सी, 376-डी, 376-डी, 376-डी, 376-डीबी, 376-ई में उल्लिखित बलात्कार और अवैध यौन संभोग के अपराधों के लिए।

33. यह देखते हुए कि भारत में आपराधिक कानून व्यवस्था की प्रकृति, राज्य संशोधनों से जुड़ी हुई है, अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत देने के लिए अधिकार क्षेत्र का प्रयोग मंच खरीदारी की संभावना से अवगत होना चाहिए। हम अंतर-राज्यीय गिरफ्तारी पर कानून के विकास पर भी ध्यान देना आवश्यक समझते हैं, क्योंकि यह 'गिरफ्तारी की आशंका' के केंद्र में है, जिसके लिए उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय की असाधारण अधिकारिता उस मामले में आकर्षित होती है जब आरोपी उस

अधिकार क्षेत्र से अलग क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में रहता है या स्थित होता है जिसमें अपराध का संज्ञान सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा लिया जाता है।

34. सी. आर. पी. सी. की धारा 48 पुलिस को अन्य क्षेत्राधिकारों में किसी आरोपी का पीछा करने की अनुमति देती है। एक पुलिस अधिकारी, बिना वारंट के गिरफ्तार करने के उद्देश्य से, जिसे उसे गिरफ्तार करने की अनुमति है, भारत में कहीं भी किसी व्यक्ति का पीछा कर सकता है। गिरफ्तारी को किसी विशेष अधिकार क्षेत्र से बाहर करने से पहले, पुलिस ट्रांजिट रिमांड यानी आरोपी की रिमांड को सुरक्षित करने के लिए बाध्य है, ताकि उसे अपनी हिरासत में एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सके, आमतौर पर उसे संबंधित मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने के उद्देश्य से, जिसके पास मामले को चलाने/करने का अधिकार क्षेत्र है। इस तरह के रिमांड का प्राथमिक उद्देश्य पुलिस को हिरासत में लिए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान पर स्थानांतरित करने में सक्षम बनाना है जहां मामले की जांच और मुकदमा चलाया जा सके। हालांकि विभिन्न मामलों में पुलिस और जांच एजेंसियां अपने कानूनी दायरे में काम करते हुए आवश्यक संयम बरतने में विफल रही हैं। यह उपरोक्त कारण है कि गिरफ्तारी की आशंका रखने वाला आरोपी गिरफ्तारी से पहले जमानत मांगता है। भारत में न्यायालयों को इस तरह के आवेदनों के बारे में सतर्क रहना होगा, विशेष रूप से जब किसी व्यक्ति पर अपराध करने का आरोप लगाया जाता है, तो उस स्थान के अलावा किसी अन्य स्थान पर आपराधिक कानून को लागू करके आगे बढ़ाया जा सकता है जहां अपराध वास्तव में हुआ है। ऐसी परिस्थितियों में न्यायालयों को न्याय तक पहुँच के हितकारी सिद्धांत के संदर्भ में अभियुक्त के हित को संतुलित करना चाहिए जो संविधान के अनुच्छेद 21 के साथ-साथ राज्य नीति के निदेशक सिद्धांत का एक पहलू है, विशेष रूप से

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

अनुच्छेद 39 (ए)। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि यह संविधान के अनुच्छेद 14 का एक पहलू है जो देश के प्रत्येक व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता और कानून के समान संरक्षण की गारंटी देता है।

35. इस मामले में, हम उस मामले से चिंतित हैं जिसे 'पारगमन अग्रिम जमानत' कहा जाता है। जैसा कि हमने देखा है, सीआरपीसी में 'अग्रिम जमानत' शब्द की अवहेलना नहीं की गई है, हालांकि इसका पता सीआरपीसी की धारा 438 से लगाया जा सकता है। बालचंद जैन में इस अदालत ने गिरफ्तारी की प्रत्याशा में अग्रिम जमानत का अर्थ जमानत बताया था। गुरबख्श सिंह सिबिया के मामले में संविधान पीठ ने कहा है कि आपराधिक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति का प्रयोग करने के लिए प्राथमिकी की एक शर्त पूर्ववर्ती नहीं है, धारा 438 के तहत शक्ति के आह्वान के लिए जो आवश्यक है वह यह है कि अग्रिम जमानत मांगने वाले व्यक्ति को आसन्न गिरफ्तारी का उचित विश्वास दिखाना चाहिए। यदि अभिव्यक्ति 'अग्रिम जमानत' एक अवज्ञापूर्ण अभिव्यक्ति नहीं है, तो यह स्वाभाविक है कि बड़ी अभिव्यक्ति 'पारगमन अग्रिम जमानत' सी. आर. पी. सी. में किसी भी स्पष्टीकरण को लागू नहीं करेगी। संभवतः पारगमन अग्रिम जमानत की आवश्यकता और

आवश्यकता इसलिए हुई है क्योंकि पुलिस को अन्य क्षेत्राधिकारों में किसी आरोपी का पीछा करने के लिए सीआरपीसी के तहत शक्ति प्रदान की गई है। अधिकार क्षेत्र के बाहर किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी करने के तुरंत बाद, जहां अपराध दर्ज है, पुलिस ट्रांजिट रिमांड हासिल करने के लिए बाध्य है। गिरफ्तार व्यक्ति को निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना है। यदि ऐसा मजिस्ट्रेट यह मानता है कि उसके पास उस मामले की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है जिसमें आरोपी को गिरफ्तार किया गया है, तो वह आरोपी को मामले की सुनवाई करने या इसे सुनवाई के लिए करने के लिए अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के पास भेजने का आदेश दे सकता है। इस प्रकार, पुलिस अनुच्छेद 22 की आवश्यकता के अनुसार सक्षम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने के लिए आरोपी को उस स्थान पर ले जाने के लिए ट्रांजिट रिमांड हासिल करने के लिए बाध्य है जहां उसे गिरफ्तार किया गया है। जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, इस तरह के ट्रांजिट रिमांड का प्राथमिक उद्देश्य पुलिस को हिरासत में लिए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान पर स्थानांतरित करने में सक्षम बनाना है जहां मामले की जांच की जा सकती है। ऐसा प्रतीत होता है कि पारगमन रिमांड की उपरोक्त आवश्यकता से 'पारगमन अग्रिम जमानत' की आवश्यकता उत्पन्न हो गई है, क्योंकि एक पीड़ित व्यक्ति उपचार के बिना नहीं हो सकता है।

35.1. 'ट्रांजिट' शब्द लैटिन शब्द ट्रांजिटस से लिया गया है जिसका अर्थ है एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाना। चूंकि 'पारगमन' शब्द सी. आर. पी. सी. में एक अनिर्दिष्ट अभिव्यक्ति है, इसलिए हम 'पारगमन' शब्द के शब्दकोश अर्थ का सहारा ले सकते हैं। संक्षिप्त ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश, 581

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 582

10 संस्करण, संशोधित, 'पारगमन' शब्द का अर्थ है लोगों या चीजों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना; सार्वजनिक परिवहन पर यात्रियों का परिवहन; किसी स्थान से गुजरने या पार करने का कार्य। 'पारगमन 'या' पारगमन 'का अर्थ होगा पार करना या पार करना। इसी तरह, 'संक्रमण' शब्द का अर्थ है एक राज्य या स्थिति से दूसरी स्थिति में बदलने की प्रक्रिया। इसी तरह, 'अस्थायी' विशेषण का अर्थ है स्थायी नहीं; अल्पकालिक। उपरोक्त अभिव्यक्ति का एक उपयोगी उदाहरण पारगमन वीजा है जिसका अर्थ है एक वीजा जो अपने धारक को केवल एक देश से गुजरने की अनुमति देता है, न कि वहां रहने के लिए। 'पारगमन' शब्द को ब्लैक लॉ डिक्शनरी, 11 वें संस्करण में भी परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है माल या व्यक्ति का एक स्थान से दूसरे स्थान पर परिवहन; मार्ग; गुजरने का कार्य।

35.2. डॉ. ब्रोजन गोगोल के मामले में, इस न्यायालय ने यह निर्णय नहीं लिया कि क्या बॉम्बे उच्च न्यायालय को उत्तरदाताओं की अग्रिम जमानत याचिकाओं पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र था क्योंकि अपराध असम राज्य के भीतर दर्ज किए गए थे। इस संक्षिप्त बिंदु पर कि असम राज्य या असम पुलिस को प्रतिवादियों को अग्रिम जमानत देने से पहले नहीं सुना गया था, इस न्यायालय ने बॉम्बे उच्च न्यायालय के आदेश को दरकिनार कर दिया, लेकिन प्रतिवादियों को सीमित अवधि के लिए गिरफ्तारी से सुरक्षा प्रदान की ताकि वे गुवाहाटी उच्च न्यायालय का रुख कर सकें। इस तरह का

आदेश पारित करते समय, इस न्यायालय ने हालांकि एक सामान्य टिप्पणी की कि किसी भी व्यक्ति को अग्रिम जमानत देने का सवाल, जो कथित रूप से विचाराधीन अपराध से जुड़ा है, सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए गुवाहाटी उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जाना चाहिए, जिसके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर ऐसी गतिविधियों को अंजाम दिया जा सकता था। जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, यह इस न्यायालय द्वारा की गई एक सामान्य टिप्पणी थी न कि उचित निर्णय के बाद कानून की घोषणा।

35.3. अनीता गर्ग के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने यह भी कहा कि ऐसा कोई कानून या कानून नहीं है जो पारगमन या अग्रिम जमानत की अवहेलना करता हो। इसके बाद, उच्च न्यायालय ने 'पारगमन' शब्द की व्याख्या करते हुए कहा कि इसका अर्थ एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने का कार्य है। चूंकि 'अग्रिम जमानत' शब्द का अर्थ है गिरफ्तारी की आशंका रखने वाले अभियुक्त व्यक्ति को जमानत देना, 'पारगमन अग्रिम जमानत' किसी भी व्यक्ति को दी गई जमानत को संदर्भित करेगा जो उस राज्य के अलावा किसी अन्य राज्य की पुलिस द्वारा गिरफ्तारी की आशंका कर रहा है जिसमें वह वर्तमान में स्थित है। उस आधार पर, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 'पारगमन अग्रिम जमानत' का अर्थ समझाया

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

एक निश्चित निश्चित अवधि के लिए गिरफ्तारी से संरक्षण। केवल यह तथ्य कि एक अभियुक्त को पारगमन अग्रिम जमानत दी गई है, इसका मतलब यह नहीं है कि नियमित अदालत जिसके अधिकार क्षेत्र में मामला आएगा, ऐसी पारगमन जमानत का विस्तार करेगी और उसे अग्रिम जमानत में परिवर्तित करेगी। इसलिए, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पारगमन अग्रिम जमानत के अनुदान पर, अभियुक्त व्यक्ति जिसे ऐसी जमानत दी गई है, उसे सक्षम अदालत के समक्ष नियमित अग्रिम जमानत के लिए आवेदन करना होगा जो तब इस तरह के अनुरोध पर अपने गुण-दोष पर विचार करेगा। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने यह भी माना है कि पारगमन अग्रिम जमानत एक अस्थायी राहत है जो एक आरोपी को एक निश्चित अवधि के लिए मिलती है ताकि वह नियमित अदालत के समक्ष अग्रिम जमानत के लिए आवेदन कर सके। इस संबंध में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने तीस्ता अतुल सीतलवाड़ मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले पर बहुत अधिक भरोसा किया। उस मामले में, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने कहा कि एक राज्य का उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए दूसरे उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में दर्ज मामले के संबंध में पारगमन जमानत दे सकता है। बंबई उच्च न्यायालय का विचार था कि आम तौर पर अग्रिम जमानत देने की उच्च न्यायालय की शक्ति उसके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र तक सीमित है और क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के सिद्धांत की अवहेलना करके शक्ति को हड़पा नहीं जा सकता है। यह कहने के बाद, उच्च न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि स्वतंत्रता की रक्षा करने और तत्काल गिरफ्तारी से बचने के लिए बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा अस्थायी राहत दी जा सकती है।

36. ऊपर हमने जो चर्चा की है, उसे ध्यान में रखते हुए हमारा विचार है कि किसी नागरिक के जीवन, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और गरिमा के अधिकार की रक्षा करने की संवैधानिक अनिवार्यता पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय उक्त न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर दर्ज प्राथमिकी के संबंध में न्याय के हित में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत अंतरिम संरक्षण के रूप में सीमित अग्रिम जमानत दे सकता है, और निम्नलिखित शर्तों के अधीन है:

(i) सीमित अग्रिम जमानत का आदेश पारित करने से पहले, जांच अधिकारी और लोक अभियोजक जिन्हें प्राथमिकी से जब्त कर लिया गया है, उन्हें सुनवाई की पहली तारीख को नोटिस जारी किया जाएगा, हालांकि एक उपयुक्त मामले में अदालत को अंतरिम अग्रिम जमानत देने का विवेकाधिकार होगा।

((ii) सीमित अग्रिम जमानत देने के आदेश में कारण दर्ज होना चाहिए कि आवेदक अंतर-राज्यीय 583 को क्यों पकड़ता है।

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 584

गिरफ्तारी और जाँच की स्थिति पर सीमित अग्रिम जमानत या अंतरिम संरक्षण के इस तरह के अनुदान का प्रभाव, जैसा भी मामला हो।

(iii) जिस अधिकार क्षेत्र में अपराध का संज्ञान लिया गया है, वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 में राज्य संशोधन के माध्यम से उक्त अपराध को अग्रिम जमानत के दायरे से बाहर नहीं करता है।

((iv) अग्रिम जमानत के लिए आवेदक को अदालत से अग्रिम जमानत लेने में अपनी असमर्थता के बारे में अदालत को संतुष्ट करना चाहिए, जिसके पास इस मामले का संज्ञान लेने का क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र है। आवेदक द्वारा उठाए गए आधार इस प्रकार हो सकते हैं -

क. उस अधिकार क्षेत्र में जीवन, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और शारीरिक नुकसान के लिए एक उचित और तत्काल खतरा जहां प्राथमिकी दर्ज की गई है;

(ख) स्वतंत्रता के अधिकार के उल्लंघन या मनमानेपन के कारण बाधाओं की आशंका;

ग. अतिरिक्त-क्षेत्रीय सीमित अग्रिम जमानत की मांग करने वाले व्यक्ति की चिकित्सा स्थिति/अक्षमता।

37. उन सभी गंभीर परिस्थितियों के लिए पूरी तरह से जवाबदेह होना असंभव होगा जिनमें आवेदक के मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए अतिरिक्त क्षेत्रीय अग्रिम जमानत का आदेश तत्काल आवश्यक हो सकता है। हम दोहराते हैं कि अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत देने की ऐसी शक्ति का प्रयोग केवल असाधारण और मजबूर करने वाली परिस्थितियों में किया जाना चाहिए, जिसका अर्थ है कि जहां पारगमन अग्रिम जमानत या अंतरिम संरक्षण से इनकार करना ताकि आवेदक को सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत आवेदन करने में सक्षम बनाया जा सके, आवेदक के लिए अपरिवर्तनीय और अपरिवर्तनीय पूर्वाग्रह पैदा करेगा।

न्यायालय, अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत के लिए इस तरह के आवेदन पर विचार करते समय, यदि उसे लगता है कि वह एक निश्चित अवधि के लिए अंतरिम सुरक्षा प्रदान कर सकता है और आवेदक को सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के समक्ष आवेदन करने का निर्देश दे सकता है।

38. इसलिए हम सैयद जफरुल हसन में पटना उच्च न्यायालय के फैसले और साधन चंद्र कोले में कलकत्ता उच्च न्यायालय के फैसले को इस हद तक दरकिनार करते हैं कि उनका मानना है कि उच्च न्यायालय के पास यह अधिकार नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत अर्थात् सीमित या पारगमन अग्रिम जमानत देने का अधिकार क्षेत्र।

39. अब हम इस निर्णय की शुरुआत में दिए गए अपने दृष्टांत पर लौटेंगे। दृष्टांत में, हमने कहा है कि यदि कोई व्यक्ति एक राज्य में अपराध करता है और प्राथमिकी उस अधिकार क्षेत्र के भीतर दर्ज की जाती है जहां अपराध किया गया था, लेकिन आरोपी दूसरे राज्य में रहता है तो वह दूसरे राज्य के न्यायालय में जा सकता है और सीमित अवधि की पारगमन अग्रिम जमानत ले सकता है। हमने अभिनिर्धारित किया है कि अभियुक्त उस राज्य में सक्षम न्यायालय से संपर्क कर सकता है जहां वह रह रहा है या एक वैध उद्देश्य के लिए जा रहा है और सीमित पारगमन अग्रिम जमानत की राहत की मांग कर सकता है, हालांकि प्राथमिकी उस जिले या राज्य के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में नहीं है जिसमें अभियुक्त रहता है, या प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर मौजूद है। इसके विपरीत, अपराध एक राज्य में किया जा सकता है, प्राथमिकी दूसरे राज्य में दर्ज की जा सकती है और अभियुक्त किसी तीसरे राज्य में रह सकता है। तीनों राज्यों में से किस न्यायालय में अभियुक्त अग्रिम जमानत देने के लिए संपर्क करेगा? हम महसूस करते हैं कि न्याय तक पहुँच की हितकारी अवधारणा को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त उस राज्य के न्यायालय से सीमित पारगमन अग्रिम जमानत या सीमित अंतरिम सुरक्षा की मांग कर सकता है जिसमें वह रहता है, लेकिन ऐसी स्थिति में, उस राज्य के सक्षम न्यायालय से 'नियमित' या पूर्ण रूप से अग्रिम जमानत की मांग की जा सकती है जिसमें प्राथमिकी दर्ज की गई है।

40. हम इस बात से अवगत हैं कि यह अभियुक्त को अग्रिम जमानत लेने के लिए अपनी पसंद का न्यायालय चुनने के लिए भी प्रेरित कर सकता है। फोरम शॉपिंग दिन का आदेश बन सकता है क्योंकि आरोपी अग्रिम जमानत लेने के लिए सबसे सुविधाजनक अदालत का चयन करेगा। यह क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की अवधारणा को भी महत्वहीन बना देगा, जो सी. आर. पी. सी. के तहत महत्वपूर्ण है। इसलिए, अभियुक्त द्वारा न्यायालय की प्रक्रिया के साथ-साथ कानून के दुरुपयोग से बचने के लिए, जिस न्यायालय के समक्ष अग्रिम जमानत की याचिका दायर की जाती है, उसके लिए यह आवश्यक है कि वह अभियुक्त और न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के बीच क्षेत्रीय संबंध या निकटता का पता लगाए, जिससे ऐसी राहत पाने के लिए संपर्क किया जाता है। न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के साथ ऐसा संबंध निवास स्थान या व्यवसाय/कार्य/पेशे के माध्यम से हो सकता है।

इससे हमारा तात्पर्य है कि अभियुक्त केवल अग्रिम जमानत लेने के उद्देश्य से किसी अन्य राज्य की यात्रा नहीं कर सकता है। कारण कि वह अदालत 585 से इस तरह की जमानत क्यों मांग रहा है

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.] 586

जिनके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर एफ. आई. आर. का नेतृत्व नहीं किया गया है, ऐसे न्यायालय को स्पष्ट और स्पष्ट किया जाना चाहिए। अभियुक्त द्वारा उस न्यायालय का दरवाजा खटने के लिए, जिसके क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में प्राथमिकी दर्ज नहीं की गई है या उस न्यायालय का दरवाजा खटने में असमर्थता के लिए, जहां तुरंत प्राथमिकी दर्ज की गई है, इस पर विश्वास करने का कोई कारण या गिरफ्तारी की आसन्न आशंका होनी चाहिए।

41. हमारे देश की विशालता और इसकी लंबाई और चौड़ाई को ध्यान में रखते हुए और नागरिकों के जीवन की जटिल प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, यदि किसी विशेष राज्य में किसी व्यक्ति द्वारा कोई अपराध किया गया है और यदि प्राथमिकी किसी अन्य राज्य में की गई है और अभियुक्त न्याय तक पहुंच को ध्यान में रखते हुए किसी तीसरे राज्य में निवासी है, तो आरोपी जो तीसरे राज्य में रह रहा है या जो किसी वैध उद्देश्य के लिए वहां मौजूद है, उसे तीसरे राज्य में अस्थायी प्रकृति की सीमित अग्रिम जमानत की राहत लेने में सक्षम बनाया जाना चाहिए।

42. जबकि हम ऐसा मानते हैं, हम इस तथ्य से अवगत हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (ई) में उच्च न्यायालय की अभिव्यक्ति इस प्रकार है: (i) किसी राज्य के संबंध में, उस राज्य के लिए उच्च न्यायालय; (ii) उस केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में जिसे किसी राज्य के लिए उच्च न्यायालय की अधिकारिता कानून द्वारा विस्तारित की गई है, वह उच्च न्यायालय; (iii) किसी अन्य केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय के अलावा उस क्षेत्र के लिए आपराधिक अपील का सर्वोच्च न्यायालय। सी. आर. पी. सी. की धारा 6 में कहा गया है कि सी. आर. पी. सी. के अलावा किसी भी कानून के तहत गठित उच्च न्यायालयों और न्यायालयों के अलावा, प्रत्येक राज्य में, अन्य बातों के साथ-साथ, सत्र न्यायालय होंगे। धारा 7 क्षेत्रीय विभाजनों के बारे में बात करती है। धारा 7 की उप-धारा (1) में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य एक सत्र प्रभाग होगा या सत्र प्रभागों से बना होगा और प्रत्येक सत्र प्रभाग, दंड प्रक्रिया संहिता के प्रयोजनों के लिए, एक जिला होगा या जिलों से बना होगा। परंतुक में कहा गया है कि प्रत्येक महानगर क्षेत्र एक अलग सत्र प्रभाग और जिला होगा। धारा 9 की उप-धारा (1) में कहा गया है कि राज्य सरकार प्रत्येक सत्र प्रभाग के लिए एक सत्र न्यायालय की स्थापना करेगी; प्रत्येक सत्र न्यायालय की अध्यक्षता एक न्यायाधीश करेगा, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जाएगा; उच्च न्यायालय सत्र न्यायालय में अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए अतिरिक्त सत्र न्यायाधीशों की भी नियुक्ति कर सकता है और ऐसे न्यायाधीश किसी अन्य प्रभाग में भी बैठ सकते हैं जो उच्च न्यायालय द्वारा निर्देशित किया जाए।

43. सी. आर. पी. सी. की धारा 26 उन न्यायालयों से संबंधित है जिनके द्वारा मामले की सुनवाई की जा सकती है जिसमें कहा गया है कि सी. आर. पी. सी. के अन्य प्रावधानों के अधीन, कोई भी

आई. पी. सी. के तहत अपराध का मुकदमा (i) उच्च न्यायालय; (ii) सत्र न्यायालय; या (iii) किसी अन्य न्यायालय द्वारा चलाया जा सकता है जिसके द्वारा ऐसा अपराध पहली अनुसूची में विचारण योग्य दिखाया गया है। किसी अन्य विधि के अधीन अपराध की दशा में जब ऐसी विधि में इस निमित्त किसी न्यायालय का उल्लेख किया जाता है, तो ऐसे न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया जा सकता है और जब किसी न्यायालय का उल्लेख नहीं किया जाता है तो (i) उच्च न्यायालय; या (ii) किसी अन्य न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया जा सकता है जिसके द्वारा ऐसा अपराध पहली अनुसूची में विचारण योग्य दिखाया गया है।⁴⁴ इसके अलावा, सी. आर. पी. सी. की धारा 438 को पढ़ने पर, हम यह नहीं मानते हैं कि "उच्च न्यायालय" या "सत्र न्यायालय" अभिव्यक्ति स्थानीय सीमाओं या किसी विशेष क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार के लिए प्रतिबंधित है। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि यदि एक राज्य में प्राथमिकी दर्ज की जाती है तो आरोपी अग्रिम जमानत के लिए दूसरे राज्य में अदालत का दरवाजा खटखटा सकता है। वह ऐसा कर सकता है, यदि किसी भी राज्य में प्राथमिकी दर्ज करने के समय, वह किसी अन्य राज्य में वैध उद्देश्य के लिए रह रहा है या वहां मौजूद है। वास्तव में, सी. आर. पी. सी. की धारा 438 को पढ़ने पर, यह सामने नहीं आता है कि "उच्च न्यायालय" या "सत्र न्यायालय" अभिव्यक्ति का संदर्भ केवल उस स्थान या क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार के लिए होना चाहिए जिसके भीतर एफ. आई. आर. दर्ज की गई है। यदि यह निहितार्थ होता, तो यह धारा में ही या एक आवश्यक निहितार्थ से स्पष्ट रूप से स्पष्ट होता। "उच्च न्यायालय" और "सत्र न्यायालय" शब्दों के समक्ष "द" शब्द के आगे उपयोग का यह भी अर्थ नहीं है कि केवल उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय, जैसा भी मामला हो, जिसके अधिकार क्षेत्र में प्राथमिकी दर्ज की गई है, पारगमन अग्रिम जमानत देने के लिए अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में सक्षम है।

45. साथ ही, हम इस तथ्य को भी ध्यान में रखते हैं कि आरोपी उस राज्य में पूर्ण रूप से अग्रिम जमानत नहीं ले सकता है जहां वह एक निवासी है जब प्राथमिकी एक अलग राज्य में दर्ज की गई है। हालांकि, हमने ऊपर जो चर्चा की है, उसे ध्यान में रखते हुए, वह उस राज्य में सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय से पारगमन अग्रिम जमानत लेने का हकदार होगा, जहाँ वह निवासी है, जो आवश्यक रूप से एक सीमित अवधि की होनी चाहिए ताकि सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय से नियमित अग्रिम जमानत प्राप्त की जा सके। इस तरह के प्रावधान की आवश्यकता संबंधित व्यक्ति की स्वतंत्रता को सुरक्षित करना है। चूंकि अग्रिम जमानत के साथ-साथ पारगमन अग्रिम जमानत आंतरिक रूप से भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत व्यक्तिगत स्वतंत्रता से जुड़ी हुई है और चूंकि हमने ऐसी स्थिति में न्याय तक पहुंच की अवधारणा का विस्तार किया है और इसके अनुच्छेद 14 को ध्यान में रखते हुए पारगमन 587 के विकसित प्रावधान को संवैधानिक अभेद्यता देना आवश्यक होगा।

अग्रिम जमानत।अन्यथा, एक योग्य मामले में, व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ-साथ न्याय तक पहुंच से इनकार करने की संभावना है, क्योंकि जब तक संबंधित व्यक्ति अग्रिम जमानत लेने के लिए सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय का दरवाजा खटता है, तब तक बहुत देर हो सकती है क्योंकि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है।यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि पारगमन अग्रिम जमानत देने वाला न्यायालय स्पष्ट रूप से पारगमन अग्रिम जमानत मांगने वाले व्यक्ति द्वारा व्यक्त की गई आशंका की डिग्री और गंभीरता की जांच करेगा; जबकि इस तरह के अधिकार क्षेत्र का अंतर्निहित उद्देश्य मनमाने ढंग से पुलिस कार्रवाई को विफल करना और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करना है, इसके अलावा एक सीमित दायरे में न्याय तक तत्काल पहुंच प्रदान करना है।

46. यदि सीमित/अस्थायी अग्रिम जमानत के लिए याचिका की अस्वीकृति पूरी तरह से क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की अवधारणा के संदर्भ में की जाती है, तो यह धारा 438 के तहत शक्तियों के प्रयोग पर प्रतिबंध जोड़ना होगा।हमारे विचार में, इसके परिणामस्वरूप गर्भपात और न्याय का उपहास होगा, जिससे गिरफ्तारी की आशंका रखने वाले आरोपी की प्रतिकूलता बढ़ जाएगी।यह न्याय तक पहुँच के सिद्धांतों के खिलाफ भी होगा।हम ऐसा इस कारण से कहते हैं कि एक अभियुक्त को तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि वह उचित संदेह से परे और कानून के अनुसार दोषी साबित न हो जाए।परिस्थितियों में, हम मानते हैं कि सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय, जैसा भी मामला हो, अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर सकता है और सीमित अग्रिम जमानत के लिए याचिका पर विचार कर सकता है, भले ही प्राथमिकी अपने क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं की गई हो और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, यदि गिरफ्तारी की आशंका रखने वाला आरोपी अग्रिम जमानत देने के लिए मामला बनाता है, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्राथमिकी उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर दर्ज नहीं की गई है, कम से कम पारगमन अग्रिम जमानत देने के लिए आरोपी के मामले पर विचार करें, जो सीमित अवधि का अंतरिम संरक्षण है, जब तक कि ऐसा आरोपी सक्षम सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय, जैसा भी मामला हो, से संपर्क नहीं करता है।

47. ऐसा मामला भी हो सकता है जिसमें आरोपी को कई राज्यों में एक ही अपराध के लिए कई प्राथमिकियों का सामना करना पड़ रहा हो।वह किसी विशेष सत्र न्यायालय या किसी राज्य के उच्च न्यायालय से अंतरिम सुरक्षा की मांग कर सकता है।क्या उसे अग्रिम जमानत लेने या कई पूर्व-गिरफ्तारी जमानत लेने के उद्देश्य से एक राज्य से दूसरे राज्य में जाना पड़ता है?हम ऐसी स्थिति का जवाब देने का प्रयास नहीं करेंगे क्योंकि वर्तमान मामले के तथ्यों में ऐसी स्थिति शामिल नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 15 एस सी आर।

48. एक अन्य मुद्दा जो दोहराने की मांग करता है, वह यह है कि क्या जांच और मुकदमे के सामान्य स्थान में वह स्थान शामिल होगा जहां शिकायतकर्ता-पत्नी अपने पति से अलग होने के बाद रहती है।सी. आर. पी. सी. की धारा 177 के अनुसार जांच और मुकदमे के सामान्य स्थान के संबंध में

कानून की स्थिति, विशेष रूप से क्रूरता और घरेलू हिंसा का आरोप लगाने वाले वैवाहिक मामलों में, पत्नी द्वारा आरोप लगाया गया है।

बिहार राज्य बनाम देवकरण नेन्शी, (1972) 2 एस. सी. सी. 890 का मामला; सुजाता मुखर्जी (श्रीमती) बनाम प्रशांत कुमार मुखर्जी (1997) 5 एस. सी. सी. 30; वाई. अब्राहम अजीत बनाम। पुलिस निरीक्षक, चेन्नई, (2004) 8 एस. सी. सी. 100, रमेश बनाम टी. एन. राज्य (2005) 3 एस. सी. सी. 507; मनीष रतन बनाम राज्य

एम. पी., (2007) 1 एस. सी. सी. 262 ने कहा कि यदि अवैध संबंध बनाने वाले तत्त्वों में से कोई भी स्थानीय अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं हुआ है, तो वह अधिकार क्षेत्र वैवाहिक संबंध की जांच और मुकदमे का सामान्य स्थान नहीं हो सकता है। हालाँकि इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने

रूपाली देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2019) 5 एस. सी. सी. 384 (रूपाली देवी)

वैवाहिक घर में किए गए कृत्यों के कारण अपने माता-पिता के घर में रहने के दौरान भी पत्नी के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव माता-पिता के घर में धारा 498 ए के अर्थ के भीतर क्रूरता के बराबर होगा। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उस स्थान की अदालतें जहां पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा की गई क्रूरता के कृत्यों के कारण पत्नी को छोड़ने या वैवाहिक घर से खदेड़ दिए जाने के बाद आश्रय लेती है, उन्हें भी, तथ्यात्मक स्थिति के आधार पर, आई. पी. सी. की धारा 498-ए के तहत अपराध करने का आरोप लगाने वाली शिकायत पर विचार करने का अधिकार होगा।

49. रूपाली देवी को आवेदन करना, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि शिकायतकर्ता-पत्नी ने दावा किया है कि राजस्थान के चिरावा में अपने माता-पिता के घर लौटने के बाद भी फोन पर जान से मारने की धमकी और उत्पीड़न प्राप्त हुआ है, मुकदमे का सामान्य स्थान चिरावा हो सकता है। लेकिन वर्तमान मामले में विवादित आदेशों द्वारा आरोपी पति और उसके परिवार के सदस्यों को राजस्थान के चिरावा पुलिस स्टेशन में जांच अधिकारी और लोक अभियोजक को नोटिस जारी किए बिना अतिरिक्त-क्षेत्रीय अग्रिम जमानत दे दी गई, जिसमें अपीलार्थी ने प्राथमिकी दर्ज की थी। वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और ऊपर विचार किए गए बिंदुओं के निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए, हम इन अपीलों को निम्नलिखित शर्तों में अनुमति देते हैं और उनका निपटारा करते हैं:

प्रिया इंडोरिया बनाम कर्नाटक राज्य और ओ. आर. एस. ईटीसी। [बी. वी. नागरत्ना, जे.]

589

ए। बेंगलुरु शहर के विद्वत अतिरिक्त शहर सिविल और सत्र न्यायाधीश के विवादित आदेश आपराधिक गड़बड़ियों की अनुमति देने के लिए प्रतिवादी संख्या 2 पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते हैं। सं. 3941/2022, 3943/2022, 3944/2022 और 3945/2022।

बी। इसलिए विवादित आदेशों को अलग कर दिया जाता है।

ग. हालांकि, न्याय के हित में, यह निर्देश दिया जाता है कि अगले चार हफ्तों तक अभियुक्तों के खिलाफ कोई दंडात्मक कदम नहीं उठाए जा सकते हैं, ताकि वे अग्रिम जमानत के लिए राजस्थान के चिरावा में अधिकार क्षेत्र की अदालत का दरवाजा खटखटाने में सक्षम हो सकें।

घ. यह भी निर्देश दिया जाता है कि यदि सी. आर. पी. सी. की धारा 438 के तहत चिरावा में सत्र न्यायालय या राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष आवेदन किए जाते हैं, तो उन पर शीघ्रता से और अपने गुण-दोष के आधार पर निर्णय लिया जाएगा।

हम विद्वान वरिष्ठ वकील और विद्वान ए. एस. जी., श्री विक्रमजीत बनर्जी द्वारा प्रदान की गई बहुमूल्य सहायता के लिए अपनी सराहना दर्ज करते हैं, जिन्होंने इस मामले में न्यायमित्र के रूप में अग्रिम प्रस्तुतियाँ दी हैं और साथ ही इस मामले में पेश हुए अन्य वरिष्ठ वकील और वकील भी हैं।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोट:

अपीलों का निपटारा किया गया।

निधि जैन